[2021] 5 एस. सी. आर. 87

गौतम नवलखा

वी.

राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण

(2021 की आपराधिक अपील संख्या 510)

12 मई, 2021

[उदय उमेश ललित और के. एम. जोसेफ, जे. जे.]

भारत का संविधानः Art.21-नजरबंदी-जब किसी नागरिक को नजरबंदी पर रखा जाता है, जिसका प्रभाव उससे वंचित होने का होता है। कोई भी स्वतंत्रता, यह न केवल अभिरक्षा होगी, बल्कि इसमें उसे मौलिक स्वतंत्रताओं से वंचित करना शामिल होगा जब तक कि ऐसी स्वतंत्रताएँ न हों।

विशेष रूप से संरक्षित-किसी व्यक्ति के नजरबंदी से गुजरने और पूर्ण निषेध के मामले में, उसे अपने घर से बाहर जाने से मना करने वाले मामले के तथ्यों में,

कारावास के मामले में वर्णित अभिरक्षा समान रूप से मौजूद है Art.21 के तहत अधिकार निस्संदेह नागरिकों और गैर-नागरिकों के लिए उपलब्ध है-जबकि व्यक्तिगत स्वतंत्रता एक व्यापक अभिव्यक्ति है जो सक्षम है

इसके दायरे में, किसी व्यक्ति पर लगाए गए सभी प्रकार के प्रतिबंधों से स्वतंत्रता के अर्थ में स्वतंत्रता से वंचित होने के अधिकार के अलावा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अपरिवर्तनीय मूल में, निस्संदेह, जबरन हिरासत में रहने के खिलाफ स्वतंत्रता शामिल है।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-उपचार खुले हैं

एस के तहत रिमांड के मामले में एक आरोपी को। 167 - आयोजित किया गयाः एस के तहत एक आदेश। 167 विशुद्ध रूप से एक अंतर्वर्ती आदेश है-कोई संशोधन नहीं है रखरखाव योग्य-एस के तहत एक याचिका। 482 इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है-जब किसी गैर-जमानती अपराध में गिरफ्तार किया गया व्यक्ति हिरासत में है, तो उसमें निहित प्रतिबंधों के अधीन, उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के अलावा कोई अन्य अदालत, जिसके समक्ष उसे लाया जाता है, उसे धाराओं के तहत जमानत पर रिहा कर सकती है। 437 एस. 439 उच्च की विशेष शक्तियों से संबंधित

हिरासत में रखे गए व्यक्ति को जमानत देने के लिए अदालत और सत्र न्यायालय

उक्त अदालतें मजिस्ट्रेट के आदेश में किसी भी शर्त को दरकिनार या संशोधित कर सकती हैं-आम तौर पर, जब अदालत रिमांड के अनुरोध पर विचार करती है तो जमानत के लिए एक आवेदन होगा-यह जमानत देने के लिए अदालत पर निर्भर करता है, जिसमें विफल रहने पर रिमांड का आदेश होगा।

फॉलो करें।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: एसएस। 437 , 439 – जबकि रिमांड रिपोर्ट पर मजिस्ट्रेट द्वारा आवेदन पर विचार किया जाता है

जमानत एस के तहत स्थानांतरित की जा सकती है। 439 एस के नीचे जाने के बजाय। 437 उसमें निहित प्रतिबंधों को ध्यान में रखते हुए-हालांकि एस के तहत एक आवेदन। 397 रिमांड के खिलाफ नहीं होगा, जमानत के लिए एक आवेदन एस के तहत होगा। 439 - इसलिए, आम तौर पर अभियुक्त जमानत और वैधता की मांग करेगा और रिमांड की आवश्यकता पर भी उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा एक आवेदन में विचार किया जाएगा।

एस के तहत। 439 - इसमें कोई संदेह नहीं है कि एस के तहत अतिरिक्त प्रतिबंध हैं। 43 (डी) यू. ए. पी. ए. का (5) उक्त प्रावधानों के तहत मामलों में भारत के नागरिकों पर लागू होता है।

कानून।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-क्या बंदी प्रत्यक्षीकरण का एक रिट एस के तहत रिमांड के आदेश के खिलाफ है। 167 में से

संहिता-एक बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका वह है जो अवैध निरोध के मामले में निवारण की मांग करती है-इसका उद्देश्य सबसे त्वरित उपाय होना है क्योंकि स्वतंत्रता दांव पर है-यदि रिमांड पूरी तरह से अवैध है या रिमांड अधिकार क्षेत्र की कमी से पीड़ित है, तो बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका वास्तव में होगी-समान रूप से, यदि रिमांड का आदेश पूरी तरह से यांत्रिक तरीके से पारित किया जाता है, तो प्रभावित व्यक्ति बंदी प्रत्यक्षीकरण का उपचार ले सकता है-ऐसी स्थितियों को छोड़कर, बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका झूठ नहीं बोलेगी।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: एसएस। 167 , 439 – क्या उच्च न्यायालय (उच्च न्यायालय सहित) इसके तहत शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं

एस. 167 संहिता की-पूर्वनिर्धारित जमानत के प्रयोजन के लिए अभिरक्षा की अवधि की गणना की जा सकती है-यद्यपि मजिस्ट्रेट के पास उच्च न्यायालयों द्वारा प्रयोग की जाने वाली उचित अधिकारिता के माध्यम से रिमांड का आदेश देने की शक्ति निहित है, (वास्तव में, इसमें s.439 के तहत कार्य करने वाला सत्र न्यायालय शामिल होगा) s के तहत शक्ति। 167 यह भी हो सकता है

मजिस्ट्रेट से श्रेष्ठ न्यायालयों द्वारा प्रयोग किया जाएगा-जबकि सामान्य रूप से, मजिस्ट्रेट मूल न्यायालय है जो प्रयोग करेगा

एस के तहत रिमांड की शक्ति। 167 , उच्च न्यायालयों द्वारा शक्ति का प्रयोग जिसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय सहित उच्च न्यायालयों द्वारा आम तौर पर अभिरक्षा (पुलिस या न्यायिक अभिरक्षा) का आदेश दिया जाएगा, वास्तव में गणना करने के उद्देश्य से अभिरक्षा होगी।

जिस अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर किया जाना चाहिए, अभियुक्त के साथ विफल रहने पर चूक जमानत का वैधानिक अधिकार प्राप्त हो जाता है-ऐसी परिस्थितियों में, हिरासत की टूटी हुई अवधि को गिना जा सकता है कि क्या गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

मजिस्ट्रेट या उच्च न्यायालयों के आदेश से अभिरक्षा का सामना करना पड़ता है, यदि अभिरक्षा के बाद जांच अधूरी रहती है, क्या

निरंतर या टूटी हुई अवधि एक साथ आवश्यक अवधि तक पहुँचती है; डिफ़ॉल्ट जमानत हिरासत में लिए गए व्यक्ति का अधिकार बन जाता है।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-पारगमन आदेश, पारगमन रिमांड के अनुसार रिमांड का प्रभाव नहीं हो सकता है

न्यायिक अभिरक्षा क्योंकि पुलिस को विशेष रूप से उस व्यक्ति को अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने का काम सौंपा गया है

इसलिए, पुलिस अभिरक्षा-यदि यह सोचा जाता है कि यात्रा के दौरान, पारगमन आदेश के आधार पर आरोपी से पूछताछ करना अस्वीकार्य है, तो इस तरह की पूछताछ एस के तहत आदेश प्राप्त किए बिना अनुमति प्राप्त यात्रा के समय के दौरान समान रूप से अस्वीकार्य होगी। 167 - यदि ऐसी यात्रा के दौरान भी, आरोपी स्वयंसेवी एक बयान के साथ अन्यथा एस के अंतर्गत आते हैं। 27 साक्षय अधिनियम के अनुसार, यह तब होगा जब आरोपी पुलिस की हिरासत में होगा-यदि यह पुलिस की हिरासत में है

तब, ट्रांजिट रिमांड देने वाले मजिस्ट्रेट का आदेश चूक के उद्देश्य के लिए अवधि को पूरा करने के लिए समय निर्धारित करेगा। जमानत।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.428-निरोध की अवधि, सेट् ऑफ-आयोजितः s.428 एक दोषी व्यक्ति को हिरासत की अवधि प्राप्त करने में सक्षम बनाता है जो उसने जांच, जांच या मुकदमे के दौरान की है। कारावास।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-एक आरोपी को हिरासत में लेना-पुलिस अधिकारी आरोपी को हिरासत में ले सकता है और उससे पूछताछ कर सकता है।

जाँच का क्रम-हालाँकि, अधिकारी अभियुक्त को गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान तक की यात्रा के लिए लिए लिए गए समय को छोड़कर 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में नहीं रख सकता है जहाँ मजिस्ट्रेट मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम है-यदि वह आरोपी को पेश नहीं कर सकता है और जाँच अधूरी है, तो अधिकारी गिरफ्तार व्यक्ति को निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने के लिए कर्तव्यबद्ध है-निकटतम मजिस्ट्रेट का अधिकार क्षेत्र हो भी सकता है और नहीं भी-वह अनुरोध के आधार पर गिरफ्तार व्यक्ति को हिरासत में रखने का आदेश दे सकता है। रिमांड के लिए-वह काफी हद तक केस डायरी में प्रविष्टियों पर और इस तरह की रिमांड की आवश्यकता के बारे में संतुष्ट होने पर भरोसा करेगा जो कारणों से प्रकट होना चाहिए मजिस्ट्रेट पुलिस हिरासत [2021] 5 एस. सी. आर. का आदेश दे सकते हैं।

पहले 15 दिनों के दौरान (यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में, पहले 30 दिन) ऐसी अवधि के बाद, मजिस्ट्रेट हिरासत का निर्देश दे सकता है जिसे न्यायिक हिरासत या ऐसी अन्य हिरासत के रूप में वर्णित किया गया है जिसे वह उचित समझे-इसमें कोई संदेह नहीं है कि मजिस्ट्रेट के लिए पहले 15 दिनों के दौरान पूरी तरह से पुलिस हिरासत से इनकार करने के लिए खुला है-वह पहले 15 दिनों के दौरान एक बार में नहीं बल्कि किश्तों में पुलिस हिरासत दे सकता है-यह मजिस्ट्रेट के लिए भी खुला है कि वह गिरफ्तार व्यक्ति को जमानत पर रिहा करे -

एस के तहत आगे की योजना। 167 क्या वह अभिरक्षा (निरोध/अभिरक्षा) ऐसे प्रावधानों के तहत अधिकृत है, यदि यह सीमा से अधिक है

आरोप पत्र दायर किए बिना अधिकतम अवधि, हिरासत में रखे गए व्यक्ति को डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने का अधिकार देती है-वास्तव में, वह व्यक्ति हिरासत में जमानत देने में असमर्थ होने के कारण हिरासत में है, लेकिन वह निस्संदेह मजिस्ट्रेट/उच्च न्यायालय के आदेशों के तहत हिरासत में बिताई गई पूरी अवधि को गिनने का हकदार होगा। 167 एस के तहत बंद करने के उद्देश्य से। 428 .

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-s के तहत क्रम में अवैधता का प्रभाव। 167 - एक आदेश एक व्यक्ति को रिमांड पर लेने का इरादा रखता है

एस के तहत। 167 – यह उसके तहत अनिवार्य आवश्यकताओं का पालन किए बिना किया जाता है-इसके परिणामस्वरूप वास्तविक अभिरक्षा होती है-अभिरक्षा की अवधि डिफ़ॉल्ट जमानत में गिनी जाएगी। s.167 (3) अनिवार्य रूप से कारणों को दर्ज किया जाना चाहिए यदि पुलिस हिरासत का आदेश दिया जाता है-दिमाग का उपयोग होना चाहिए-यदि दिमाग का पूरी तरह से गैर-उपयोग या कारण दर्ज नहीं किए जाते हैं, जबकि यह अभ्यास को अवैध और हस्तक्षेप के लिए उत्तरदायी बना सकता है, तो वास्तविक हिरासत से गुजरना पड़ता है।

आदेश के तहत, निश्चित रूप से डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए गिना जाएगा-इसी तरह, पिछली संहिता (1898) के विपरीत, वर्तमान संहिता अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने का आदेश देती है जैसा कि प्रावधान के खंड (बी) में प्रावधान किया गया है। 167 (2) - उक्त प्रावधान का पालन किए बिना आदेशित अभिरक्षा अवैध हो सकती है-लेकिन वास्तविक अभिरक्षा से गुजरना फिर से डिफ़ॉल्ट जमानत में गिना जाएगा। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-यदि न्यायालय एस के तहत आह्वान और कार्य करने का इरादा रखता है। 167 , निरोध तब भी योग्य होगा जब आदेश पारित करने में अवैधता हो-ऐसे मामलों में वास्तविक अभिरक्षा क्या बात है-हालाँकि, जब न्यायालय एस के तहत कार्य करने का इरादा नहीं रखता है। 167 , तब न्यायालय के आदेश के अनुसरण में शामिल निरोध एस के तहत निरोध के रूप में अर्हता प्राप्त नहीं कर सकता है। 167 .

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-न्यायिक अभिरक्षा और पुलिस अभिरक्षा-किसी व्यक्ति के न्यायिक अभिरक्षा में रहने के बीच का अंतर

पुलिस अभिरक्षा में भेजा जाता है, वह पुलिस अधिकारियों की विशेष अभिरक्षा में जाता है क्योंकि किसी मामले में सच्चाई का पता लगाने के लिए अपरिहार्य है, इस तरह की अभिरक्षा के लिए महत्वपूर्ण आधार है-मजिस्ट्रेट को निस्संदेह ऐसी अभिरक्षा में अभिरक्षा की आवश्यकता के बारे में आश्वस्त होना चाहिए-कारण दर्ज किए जाने चाहिए-न्यायिक अभिरक्षा आम तौर पर जेल में अभिरक्षा होती है-इसे जेल अभिरक्षा के रूप में भी संदर्भित किया जाता है-जेल जेल विभाग के अंतर्गत आती है और उक्त विभाग के कर्मचारियों द्वारा कार्यरत होती है-इसलिए जेल अभिरक्षा में व्यक्ति अप्रत्यक्ष रूप से जेल अधिकारियों के माध्यम से, अदालत की अभिरक्षा में होता है-पुलिस अधिकारी को न्यायिक अभिरक्षा में किसी व्यक्ति तक पहुंच नहीं होती है जैसा कि पुलिस अभिरक्षा में किसी व्यक्ति के मामले में उसकी अनुमति नहीं होती है जब तक कि अनुमति न दी जाए।

प्राप्त किया गया जो स्पष्ट रूप से ऐसी शर्तों के अधीन होगा क्योंकि अदालत ने व्यक्ति को न्यायिक हिरासत में रखा है जिससे पूछताछ नहीं की जा सकती है

पुलिस अधिकारियों द्वारा-अब किसी मामले में, आम तौर पर, रिमांड का आदेश देने के बजाय किसी व्यक्ति को जमानत पर रिहा किया जा सकता है-कि क्या कोई मामला बनाया गया है या नहीं, यह सवाल प्रत्येक मामले के तथ्यों में तय किया जाना चाहिए-कानून द्वारा जमानत देने के संबंध में प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं जिनका पालन किया जाना चाहिए-लेकिन यदि जमानत नहीं दी जाती है तो संज्ञेय अपराध के संबंध में पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया व्यक्ति।

हिरासत में भेजा जाना चाहिए-एस के पढ़ने से यह अपरिहार्य है। 167 Cr.P.C का।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-अभियुक्त की न्यायिक हिरासत-इस मामले में आदेश के अनुसार नजरबंदी की अवधारणा

अपीलार्थी के परिसर से बाहर निकलने पर पूर्ण निषेध और सामान्य निवासियों के अलावा अन्य व्यक्तियों के साथ बातचीत करने के खिलाफ निषेधाज्ञा, और सुरक्षा के लिए गार्ड की स्थिति

लेकिन शर्त को लागू करने के लिए अपीलार्थी को न्यायिक हिरासत में रखा जाएगा - s.167 'ऐसी अभिरक्षा की बात करता है जो वह उचित समझता है'-यदि यह एस के तहत आदेशित पाया जाता है। 167 गिनती होगी।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-क्या

मजिस्ट्रेट/न्यायालय एस के तहत कार्य करते हुए गिरफ्तारी/निरोध की वैधता पर विचार करता है। 167 – आयोजित किया गया: कला. 22 (1) गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को इस तरह की गिरफ्तारी के

आधार के बारे में जल्द से जल्द सूचित किए बिना हिरासत में नहीं रखने का मौलिक अधिकार देता है-यह इसे [2021] 5 एस. सी. आर. भी घोषित करता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

हिरासत में लिए गए व्यक्ति के लिए अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी से परामर्श करने और उसका बचाव करने का मौलिक अधिकार-अब, हिरासत गिरफ्तारी का अनुसरण करती है-जिसका संबंध Art.22 (1) से है, वह यह है कि हिरासत को उसमें निर्दिष्ट अधिकारों की पूर्ति द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए-इसलिए, कड़ाई से बोलते हुए, Art.22 (1) गिरफ्तारी की वैधता पर नहीं जाता है-भारत का संविधान-Art.22 (1)।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973: s.167-जाँच एजेंसी के लिए अपीलार्थी तक पहुँच न होने का प्रभाव

हाउस अरेस्ट और अपीलार्थी के 14.4.2020 से 25.4.2020 तक पुलिस हिरासत में होने का प्रभाव-एस के तहत हिरासत का उद्देश्य। 167 यह पुलिस को अभियुक्त से पूछताछ करने में सक्षम बनाने के लिए है और यदि वह अवसर मौजूद नहीं है तो अभिरक्षा की ऐसी अवधि जो कथित रूप से एस के उद्देश्य के लिए योग्य नहीं होगी। 167 – दूसरे शब्दों में, तर्क यह प्रतीत होता है कि एस की वस्तु और योजना। 167 यह है कि

पूछताछ करने के अवसर के साथ एक जांच की जाती है

अभियुक्त और फिर भी यह 90 दिनों की अवधि के भीतर पूरा नहीं होता है जब डिफ़ॉल्ट जमानत का अधिकार उत्पन्न होता है 28.08.2018 पर कार्यवाही जब याचिका दायर की गई थी, तो उच्च न्यायालय ने पारगमन रिमांड पर रोक लगा दी और अपीलार्थी को महाराष्ट्र नहीं ले जाया जा सका-उसी आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को नजरबंद कर दिया-जांच एजेंसियों को कोई पहुंच प्रदान नहीं की गई थी

अपीलार्थी से पूछताछ करना-ऐसी परिस्थितियों में, अवधि

घर में नजरबंदी के रूप में बाहर रखा जाना चाहिए।

जेल: जेलों और कैदियों से संबंधित स्थितियाँ-जहां तक अधिभोग दर का संबंध है, चिंताजनक स्थिति

जेलों में भीड़भाड़, चर्चा की।

याचिका खारिज करते हुए कोर्ट ने कहा, पकड़ना:

क्या अपीलार्थी द्वारा नजरबंदी में बिताए गए 34 दिनों की अवधि को 90 दिनों की अवधि के तहत गिना जाना है

धारा 167 Cr.P.C।

1.1 . धारा 156 Cr.P.C के तहत, पुलिस स्टेशन का प्रभारी कोई भी पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना जांच कर सकता है।

कोई संज्ञेय मामला जिस पर अधिकारिता रखने वाला न्यायालय

ऐसे स्टेशन की सीमा के भीतर स्थानीय क्षेत्र में कोशिश करने की शक्ति है।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

जाँच प्रक्रिया से संबंधित धारा 157 पर विचार किया गया है।

अन्य बातों के साथ-साथ मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की जांच करने के लिए मौके पर आगे बढ़ने की शक्ति, और यदि आवश्यक हो, तो अपराधी की खोज और गिरफ्तारी के लिए उपाय। धारा 76 में अनुच्छेद 1,1973 के प्रावधान के साथ, वारंट के तहत गिरफ्तारी के मामले में, व्यक्ति को यात्रा के लिए लिए गए समय को छोड़कर 24 घंटे के भीतर अदालत में पेश किया जाना है।

इस तरह का परंतुक Cr.P.C, 1898 की धारा (81) में अनुपस्थित था। [पैरा 24,27] [127-एफ-एच; 128-ए; 134-सी-डी]

यू. पी. राज्य बनाम अब्दुल समद एयर 1962 एससी 1506: [1962] पूरक। एस. सी. आर. 915-लागू नहीं होता है।

1.2 भारत में, नजरबंदी की अवधारणा की जड़ें निवारक निरोध प्रदान करने वाले कानूनों में हैं। राष्ट्रीय संविधान की धारा 5 सुरक्षा अधिनियम, 1980 निवारक निरोध का प्रावधान करने वाला एक कानून है। अनुच्छेद 22 (1) और अनुच्छेद 22 (2) के तहत सुरक्षा उपाय निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले कानून के तहत उपलब्ध नहीं हैं। 'निवारक निरोध' से संबंधित कानून के संदर्भ में भारत में 'नजरबंदी' का सहारा लिया गया है। लेकिन जो प्रासंगिक है वह है

कि निवारक निरोध भी जबरन निरोध का एक रूप है। नजरबंदी हिरासत और जबरन हिरासत भी है। [पारस 43,45] [145-जी-एच; 147-एच; 148-ए]

ए. के. रॉय और अन्य। वी. भारत संघ (यू. ओ. आई.) और अन्य। आकाशवाणी (1982) एससी 710: [1982] 2 एस. सी. आर. 272-अनुसरण किया गया।

राजस्थान राज्य और अन्य। वी. शमशेर सिंह ए. आई. आर. (1985) एस. सी. 1082 [1985] पूरक। एससीआर 83-पर भरोसा किया गया।
भारत में जेलों पर एक नज़र

2.1 राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो (एन. सी. आर. बी.) द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार जेलों और जेलों से संबंधित शर्तें कैदी काफी खतरनाक होते हैं। वर्ष 2019 तक कुल 1350 जेलें थीं। 1350 जेलों में 617 उप-जेल, 410 जिला जेल, 144 केंद्रीय जेल, 86 खुली जेल, 41 विशेष जेल, 31 महिला जेल, 19 बोरस्टल स्कूल और उपरोक्त जेलों के अलावा 2 अन्य जेल शामिल हैं। कार्यकारी सारांश के अवलोकन से जहां तक अधिभोग दर का संबंध है, एक खतरनाक स्थिति का पता चलेगा। यह 2019 में 31 दिसंबर तक बढ़कर 118.5 प्रतिशत हो गया है।

पुरुष कैदियों के लिए अधिभोग दर चिंताजनक है। वास्तव में, 2019 के दौरान, कुल 18,86,092 कैदियों को जेलों में भर्ती कराया गया था। 31 दिसंबर, 2019 तक 4,78,600 कैदियों का आंकड़ा स्पष्ट रूप से उन कैदियों की संख्या पर विचार करने के बाद है जिन्हें अन्य बातों के साथ-साथ जमानत पर रिहा किया जा सकता था। 2019 में विचाराधीन कैदियों की संख्या 3,30,487 थी जो वास्तव में 69.05 थी।

कुल संख्या का प्रतिशत। कैदियों का। दिल्ली में सबसे अधिक अधिभोग दर 174.9 प्रतिशत थी, जिसके बाद उत्तर प्रदेश का स्थान था। 167.9 प्रतिशत के साथ दूसरे स्थान पर रहे। इसका मतलब है कि दिल्ली में एक जेल जिसमें 100 लोग रहने वाले थे, का उपयोग 174 लोगों को रखने के लिए किया जाता था। वहाँ एक बड़ी राशि है

भारत की जेलों में भीड़। दूसरा, एक बहुत बड़ी राशि (रु। 6818.1 करोड़) जेलों पर बजट था। दोनों पहलू हैं - नजरबंदी की संभावनाओं के संदर्भ में प्रासंगिक। [पारस 48,49,50] [154-एच; 155-ए-ई]

जैसा कि इस न्यायालय द्वारा मेनका गांधी बनाम भारत संघ मामले में समझाया गया है, जब किसी नागरिक को नजरबंद किया जाता है, जिसका प्रभाव उसे किसी भी स्वतंत्रता से वंचित करने का होता है, तो यह न केवल अभिरक्षा होगी, बल्कि इसमें अभिरक्षा के तहत नागरिकों को मौलिक स्वतंत्रताओं से वंचित करना भी शामिल होगा, जब तक कि ऐसी स्वतंत्रताओं को विशेष रूप से संरक्षित नहीं किया जाता है। एक व्यक्ति को देश के किसी भी हिस्से में जाने का मौलिक अधिकार है। यह स्पष्ट है कि एक व्यक्ति के मामले में एक नजरबंदी से गुजर रहा है और एक पूर्ण के दांतों में निषेध, अपीलार्थी को अपने घर से बाहर जाने से मना करने वाले मामले के तथ्यों में, कारावास के मामले में वर्णित अभिरक्षा की पहचान समान रूप से मौजूद है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता शायद संविधान के तहत मान्यता प्राप्त सभी मूल्यों में सबसे महत्वपूर्ण है। इसे किसी भी चीज़ से ईर्ष्या से बचाया जाना है।

अतिक्रमण, सिवाय इसके कि जहां इस तरह की घुसपैठ को कानून की स्पष्ट मंजूरी है। "कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया" अभिव्यक्ति को मेनका गांधी से शुरू होने वाले इस न्यायालय के फैसलों में एक विस्तृत और उदार व्याख्या मिली है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार प्रत्येक मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। अनुच्छेद 21 के तहत अधिकार निस्संदेह नागरिकों और गैर-नागरिकों के लिए उपलब्ध है। जबकि

व्यक्तिगत स्वतंत्रता एक व्यापक अभिव्यक्ति है जो शामिल करने में सक्षम है इसके दायरे में, संरक्षित होने के अधिकार के अलावा कई तत्व गौतम नवलखा बनाम।

किसी व्यक्ति पर लगाए गए सभी प्रकार के प्रतिबंधों से स्वतंत्रता के अर्थ में स्वतंत्रता से वंचित होने के खिलाफ, व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अपरिवर्तनीय मूल में, निस्संदेह, स्वतंत्रता शामिल है।

जबरन हिरासत में रहने के खिलाफ। [पैरा 51] [155-ई-एच; 156-ए-बी]

मेनका गांधी बनाम। भारत संघ ए. आई. आर. 1978 एस. सी. 597:

[1978] 2 एस. सी. आर. 621-निर्भर

इसकी सामग्री और अर्थ से वंचित। जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार अनिवार्य रूप से इस सिद्धांत पर भी आधारित है कि मौलिक अधिकारों के संबंध में पुरुषों के साथ समान व्यवहार किया जाए और कोई भी व्यक्ति या पुरुषों का एक समूह, यहां तक कि एक राज्य के रूप में संगठित हो, जिसके तहत वह रहता है, उसे तब तक वंचित नहीं कर सकता है जब तक कि कानून की वैध मंजूरी न हो। व्यक्तिगत स्वतंत्रता सदस्यों को किसी भी सभ्य राज्य का सबसे पोषित लक्षय बने रहना चाहिए और इसमें हस्तक्षेप उन मामलों तक ही सीमित होना चाहिए जहां इसे कानून द्वारा मंजूरी दी गई है और वास्तव में

जरूरत है। अदालत इस बहुमूल्य, अविभाज्य और अपरिवर्तनीय मूल्य को बनाए रखने के पक्ष में होगी। संयुक्त राज्य अमेरिका में आम तौर पर, नजरबंदी एक दोषसिद्धि के बाद होती है और एक विकल्प है जो अदालतों के पास किसी व्यक्ति को नजरबंदी में भेजने के लिए उपलब्ध है जो जेल की सजा के बदले में है। [पैरा 53,54] [157-डी-जी]

सरकार. आंध्र प्रदेश और अन्य आदि। ऐनी वेंकटेश्वर राव आदि। ए. आई. आर. 1977 एससी 1096: [1977]

3 एस. सी. आर. 7 पर निर्भर

CR.P.C की धारा 167 के तहत माँग के मामले में प्राप्त किए गए धन के लिए वापसी खुली है।

3.1 धारा 167 के तहत एक आदेश विशुद्ध रूप से एक अंतर्वर्ती है

आदेश दें। कोई संशोधन बनाए रखने योग्य नहीं है। धारा 482 के तहत याचिका को खारिज नहीं किया जा सकता है। जब गैर-जमानती अपराध में गिरफ्तार किया गया कोई व्यक्ति हिरासत में है, तो उसमें निहित प्रतिबंधों के अधीन, उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के अलावा कोई अन्य अदालत, जिसके समक्ष उसे लाया जाता है, उसे Cr.P.C की धारा 437 के तहत जमानत पर रिहा कर सकती है। Cr.P.C की धारा 439. विशेष [2021] 5 एस. सी. आर. से संबंधित है।

अभिरक्षा में किसी व्यक्ति को जमानत देने के लिए उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय की शक्तियाँ। उक्त अदालतें मजिस्ट्रेट के आदेश में किसी भी शर्त को दरकिनार या संशोधित भी कर सकती हैं। आम तौर पर, जब अदालत रिमांड के अनुरोध पर विचार करती है तो जमानत के लिए एक आवेदन होगा। जमानत देना अदालत का काम है और ऐसा न करने पर रिमांड का आदेश दिया जाएगा। [पारस 57,59] [159-ए-सी; 159-जी]

राज्य प्रतिनिधि। पुलिस निरीक्षक और अन्य द्वारा v. एनएम. टी.

जॉय इममक्युलेट (2004) 5 एस. सी. सी. 729: [2004] 2 पूरक।

एस. सी. आर. 71; केंद्रीय जांच ब्यूरो, विशेष

जांच प्रकोष्ठ v. अनुपम जे. कुलकर्णी (1992) 3 एससीसी

141 [1992] 3 एस. सी. आर. 158-पर निर्भर

439 इसमें निहित प्रतिबंधों को देखते हुए धारा 437 के तहत आगे बढ़ने के बजाय। हालाँकि धारा 397 के तहत एक आवेदन रिमांड के खिलाफ नहीं होगा, लेकिन जमानत के लिए आवेदन धारा 439 के तहत होगा। इसलिए, आम तौर पर अभियुक्त जमानत और वैधता की मांग करेगा और रिमांड की आवश्यकता पर उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा भी विचार किया जाएगा। धारा 439 के तहत आवेदन। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यूएपीए की धारा 43 (डी) (5) के तहत अतिरिक्त प्रतिबंध उक्त कानून के तहत मामलों में भारत के नागरिकों पर लागू होते हैं। [पैरा 60] [159-एच; 160-ए-बी]

हैबियस कॉर्पस झूठ का एक लेख भी

CR.P.C की धारा (167) के तहत माँग का आदेश।

4. बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका अवैध निरोध के मामले में निवारण की मांग करने वाली याचिका है। इसका उद्देश्य सबसे त्वरित उपाय करना है क्योंकि स्वतंत्रता दांव पर है। यदि रिमांड पूरी तरह से अवैध है या रिमांड अधिकार क्षेत्र की कमी से पीड़ित है, तो वास्तव में एक बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका होगी। समान रूप से, यदि रिमांड का आदेश पूरी तरह से यांत्रिक तरीके से पारित किया जाता है, तो व्यक्ति प्रभावित लोग हैबियस कॉर्पस का इलाज ले सकते हैं। ऐसी स्थितियों को छोड़कर, बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका झूठ नहीं बोलेगी। [पारस 61,63] [160-सी-डी; 161-एफ-जी]

मनुभाई रतिलाल पटेल बनाम। गुजरात राज्य और अन्य (2013) 1 एससीसी 314: [2012] 8 एस. सी. आर. 993; गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय और अन्य। वी. राहुल मोदी और अन्य।

(2019) 5 एस. सी. सी. 266 [2019] 5 एस. सी. आर. 91-पर निर्भर था।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

अन्य वरिष्ठ न्यायालय (एक उच्च न्यायालय को शामिल करते हुए) अनुभाग के तहत शक्ति का उपयोग कर सकते हैं (167)

OF CR.P.C.? क्या डीफाल्ट बेल के उद्देश्य के लिए ग्राहक देश के नियमों को तोड़ा जा सकता है?

5.1 यद्यपि मजिस्ट्रेट के पास रिमांड का आदेश देने की शक्ति निहित है, जिसका उपयोग मजिस्ट्रेट द्वारा उचित अधिकार क्षेत्र में किया जाता है। (वास्तव में, इसमें धारा 439 के तहत कार्य करने वाला सत्र न्यायालय शामिल होगा) धारा 167 के तहत शक्ति का प्रयोग उन न्यायालयों द्वारा भी किया जा सकता है जो मजिस्ट्रेट से श्रेष्ठ हैं।

जबकि आम तौर पर, मजिस्ट्रेट मूल न्यायालय है जो धारा 167 के तहत रिमांड की शक्ति का प्रयोग करेगा, उच्च न्यायालयों द्वारा शक्ति का प्रयोग जिसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय सहित उच्च न्यायालयों द्वारा सामान्य रूप से हिरासत (पुलिस या न्यायिक हिरासत) का आदेश दिया जाएगा, वास्तव में उस अवधि की गणना करने के उद्देश्य से हिरासत होगी जिसके भीतर उच्च न्यायालय भी शामिल है। आरोप पत्र दाखिल किया जाना चाहिए, जिसमें विफल रहने पर अभियुक्त को डिफ़ॉल्ट जमानत का वैधानिक अधिकार प्राप्त हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में अभिरक्षा की टूटी हुई अवधियों को गिना जा सकता है कि क्या अभिरक्षा मजिस्ट्रेट या उच्च न्यायालयों के आदेश से पीड़ित है, यदि अभिरक्षा के बाद जांच अधूरी रहती है, चाहे निरंतर या टूटी हुई अवधि एक साथ अपेक्षित अवधि तक पहुंच जाए; डिफ़ॉल्ट जमानत हिरासत में लिए गए व्यक्ति का अधिकार बन जाता है। [पारस 66,67] [163-बी-ई]

हस्तांतरण आदेश का प्रभाव? क्या यह ए है

उत्पाद आदेश धारा 167 CR.P.C के तहत स्रोत सोचा गया। 6.1 इस मामले में, ट्रांजिट रिमांड का आदेश 28.08.2018 पर दिया गया था। अपीलार्थी को उसी के तहत 30.08.2018 पर पुणे में मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना था। एक व्यक्ति हो सकता है

भारत के किसी भी हिस्से में एक पुलिस अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किया गया (Cr.P.C की धारा 48)। धारा 56 के तहत, बिना वारंट के गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के सामने या पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के सामने भेजा जाना है। इसके बाद, धारा 57 इस तरह से गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को मना करती है: जो उचित है उससे अधिक अवधि के लिए हिरासत में रखे जाने से। गिरफ्तारी के समय से 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में रखने से, [2021] 5 एस. सी. आर. के लिए आवश्यक समय को छोड़कर।

गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट न्यायालय तक की यात्रा। अब, धारा 57 में निर्दिष्ट 'मजिस्ट्रेट न्यायालय' मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम मजिस्ट्रेट है। धारा 57 में शामिल है - धारा 167 के तहत 'विशेष आदेश' के अभाव में यात्रा की अवधि को छोड़कर 24 घंटे की अवकाश सीमा।

[पारस 71,72] [164-बी-ई]

6.2 ट्रांजिट रिमांड के अनुसार रिमांड न्यायिक हिरासत नहीं हो सकती क्योंकि पुलिस को विशेष रूप से सौंपा गया है

व्यक्ति को अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने में कोई संदेह नहीं है। इसलिए यह पुलिस हिरासत है। क्या पुलिस आरोपी को पेश करने से पहले, यात्रा शुरू करने से पहले या यात्रा के दौरान और यात्रा के बाद पारगमन आदेश के आधार पर पूछताछ करके मामले की पूछताछ/जांच में लगी रह सकती है? यदि यह सोचा जाता है कि यात्रा के दौरान, यह अस्वीकार्य है, तो यात्रा के समय इस तरह की पूछताछ समान रूप से अस्वीकार्य होगी।

धारा 167 के तहत आदेश प्राप्त किए बिना अनुमति दी गई। यदि ऐसी यात्रा के दौरान भी, आरोपी स्वयंसेवी एक बयान के साथ अन्यथा साक्षय अधिनियम की धारा 27 के तहत आता है, तो यह तब होगा जब आरोपी पुलिस की हिरासत में होगा। यदि यह पुलिस हिरासत है, तो ट्रांजिट रिमांड देने वाले मजिस्ट्रेट का आदेश इस उद्देश्य के लिए अवधि को पूरा करने के लिए समय निर्धारित करेगा। पूर्वनिर्धारित जमानत। रिमांड आदेश, चाहे वह एक पारगमन रिमांड आदेश हो, वह है जो Cr.P.C की धारा 167 के तहत पारित किया जाता है और हालांकि यह अपीलार्थी को पेश करने के लिए हो सकता है, इसमें शामिल है।

धारा 167 के अर्थ के भीतर निरंतर निरोध को प्राधिकृत करना। [पारस 76,78] [165-एफ-एच; 166-ए; 167-ए]

CR.P.C की धारा 428 का प्रभाव।

7.1 यदि इस मामले में आदेश के अनुसार नजरबंदी को Cr.P.C की धारा 167 के अर्थ के भीतर हिरासत के रूप में माना जाना है।

यह धारा 428 के अर्थ के भीतर नजरबंदी के हिस्से के रूप में मानी जाने वाली नजरबंदी की अवधि को शामिल नहीं करता है, यदि कोई दोषसिद्धि होती है और उसके बाद सजा होती है? धारा 428 एक व्यक्ति को सक्षम बनाती है।

कारावास की अवधि के खिलाफ जांच, जांच या मुकदमे के दौरान हिरासत की अवधि के लिए दोषी ठहराया गया है। [पारस 80,82] [167-ई-जी] गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

7.2 एक योजना है जो एक आरोपी की नजरबंदी के संबंध में संहिता द्वारा उजागर की गई है। शुरुआती बिंदु दिखाई देता है

संज्ञेय अपराध के संबंध में किसी पुलिस अधिकारी द्वारा वारंट के बिना व्यक्ति की गिरफ्तारी और निरोध किया जाए। वह उसे हिरासत में ले सकता है और जाँच के दौरान उससे पूछताछ कर सकता है। हालांकि, अधिकारी गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान तक की यात्रा के लिए लिए गए समय को छोड़कर 24 घंटे से अधिक समय तक आरोपी को हिरासत में नहीं रख सकता है जहां मजिस्ट्रेट मुकदमा चलाने के लिए सक्षम है।

मामला बैठता है। यदि वह आरोपी को पेश नहीं कर सकता है और जांच अधूरी है, तो अधिकारी गिरफ्तार व्यक्ति को निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने के लिए बाध्य है। निकटतम मजिस्ट्रेट के पास अधिकार क्षेत्र हो भी सकता है और नहीं भी। वह जारी रखने का आदेश दे सकता है रिमांड के अनुरोध के आधार पर गिरफ्तार व्यक्ति को हिरासत में लेना। वह काफी हद तक केस डायरी में प्रविष्टियों पर और इस तरह के रिमांड की आवश्यकता के बारे में संतुष्ट होने पर भरोसा करेगा जो होना चाहिए

कारणों से प्रकट। मजिस्ट्रेट पहले 15 दिनों (यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में, पहले 30 दिनों) के दौरान पुलिस हिरासत का आदेश दे सकता है। ऐसी अवधि के बाद, मजिस्ट्रेट निरोध का निर्देश दे सकता है जो

न्यायिक अभिरक्षा या ऐसी अन्य अभिरक्षा के रूप में वर्णित है जो वह उचित समझे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मजिस्ट्रेट पहले 15 दिनों के दौरान पुलिस हिरासत को पूरी तरह से अस्वीकार कर सकता है। वह पहले 15 दिनों के दौरान एक बार में नहीं बल्कि किश्तों में पुलिस हिरासत दे सकता है। मजिस्ट्रेट के लिए यह भी खुला है कि वह गिरफ्तार व्यक्ति को जमानत पर रिहा करे। [पैरा 85] [169-बी-ई]

अजमेर सिंह और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य

ए. आई. आर. 1987 एससी 1646: [1987] 3 एस. सी. आर. 84-निर्भर

7.3 यदि गिरफ्तार व्यक्ति को जाँच की अवधि के दौरान हिरासत में लिया जाता है, तो वह इस अवधि को गिन सकता है, यदि उस पर अंततः Cr.P.C की धारा 428 के प्रावधानों के आधार पर आरोप लगाया जाता है, मुकदमा चलाया जाता है और दोषी ठहराया जाता है। यह हर हिरासत नहीं है जिस पर धारा 428 के तहत छूट का लाभ प्राप्त करने के लिए भरोसा किया जा सकता है। एक के तहत बिताई गई अवधि

निवारक निरोध के आदेश को किसी अपराध की जांच के संबंध में नहीं माना जा सकता है। इस प्रकार, धारा 428 के तहत 'जांच के दौरान' निरोध धारा 167 के तहत आदेश के अनुसार निरोध से अभिन्न रूप

से जुड़ा हुआ है। धारा 167 के तहत आगे की योजना यह है कि हिरासत (निरोध/हिरासत) [2021] 5 एस. सी. आर. के रूप में है।

ऐसे प्रावधानों के तहत अधिकृत, यदि यह आरोप पत्र दायर किए बिना अधिकतम अवधि की सीमा को पार कर जाता है, तो हिरासत में रखे गए व्यक्ति को डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने का अधिकार देता है। वास्तव में, व्यक्ति जमानत देने में असमर्थता के कारण सुस्त पड़ सकता है।

अभिरक्षा लेकिन वह निस्संदेह मजिस्ट्रेट/सुपीरियर कोर्ट के आदेशों के तहत हिरासत में बिताई गई पूरी अवधि को गिनने का हकदार होगा जो धारा 167 के तहत शक्तियों का प्रयोग करता है। धारा 428 के तहत बंद करने का उद्देश्य। [पारस 86,88,89] [169-एफ-जी; 170-ए-सी]

आदेश के तहत अवैधता का प्रभाव

धारा 167 CR.PC।

8.1 एक आदेश का उद्देश्य धारा 167 के तहत एक व्यक्ति को रिमांड पर लेना है। इसे अनिवार्य आवश्यकताओं का पालन किए बिना बनाया गया है।

इसके नीचे। इसके परिणामस्वरूप वास्तविक अभिरक्षा होती है। अभिरक्षा की अवधि

डिफ़ॉल्ट जमानत की ओर गिना जाएगा। धारा 167 (3) अनिवार्य करती है कि यदि पुलिस हिरासत का आदेश दिया जाता है तो कारण दर्ज किए जाएं। होना ही चाहिए मन का अनुप्रयोग। यदि पूरी तरह से दिमाग का उपयोग नहीं किया जाता है या कारणों को दर्ज नहीं किया जाता है, जबकि यह अभ्यास को अवैध और हस्तक्षेप के लिए उत्तरदायी बना सकता है, तो आदेश के तहत वास्तविक निरोध निश्चित रूप से चूक के रूप में गिना जाएगा।

जमानत। इसी तरह, पिछली संहिता (1898) के विपरीत, वर्तमान संहिता अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने का आदेश देती है।

जैसा कि धारा 167 (2) के परंतुक के खंड (बी) में प्रावधान किया गया है। उक्त प्रावधान का पालन किए बिना आदेशित अभिरक्षा अवैध हो सकती है। लेकिन वास्तविक हिरासत से गुजरना फिर से डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए गिना जाएगा। [पैरा 90] [170-सी-एफ]

8.2 विवादित फैसले में लिया गया दृष्टिकोण जो मजिस्ट्रेट के किसी भी वैध प्राधिकरण/आदेश के बिना है

अपीलार्थी के लिए धारा 167 के प्रयोजन के लिए अभिरक्षा सही नहीं है। इसलिए, यदि न्यायालय धारा 167 के तहत आह्वान और कार्रवाई करने का इरादा रखता है, तो निरोध योग्य होगा, भले ही आदेश पारित करने में अवैधता हो। ऐसे मामलों में जो बात मायने रखती है वह है वास्तविक हिरासत। हालाँकि, जब न्यायालय धारा 167 के तहत कार्य करने का इरादा नहीं रखता है, तो न्यायालय के आदेश के

अनुसार शामिल निरोध धारा 167 के तहत निरोध के रूप में योग्य नहीं हो सकता है। [पारस 91,92,93] [170-जी-एच; 171-ए-बी] गौतम नवलखा बनाम।

न्यायिक ग्राहक और पुलिस ग्राहक

9.1 क्या उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार नजरबंदी धारा 167 के अर्थ में हिरासत के बराबर है।

Cr.P.C. निस्संदेह Cr.P.C की धारा 167 में अभिरक्षा को आम तौर पर पुलिस अभिरक्षा और न्यायिक अभिरक्षा के रूप में समझा जाता है। अभिरक्षा की अवधि गिरफ्तारी के समय से शुरू नहीं होती है, बल्कि उस समय से शुरू होती है जब आरोपी को पहले रिमांड पर लिया जाता है। पुलिस हिरासत हो सकती है, (यू. ए. पी. ए. के अंतर्गत नहीं) के अंतर्गत आने वाले मामले में, केवल पहले 15 दिनों के दौरान दिया जाना चाहिए। पहले 15 दिनों के दौरान कोई संदेह नहीं है कि अदालत न्यायिक हिरासत या पुलिस हिरासत का आदेश दे सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 167 (2) के अंतिम प्रावधान में यह प्रावधान है कि अठारह वर्ष से कम आयु की महिला को हिरासत में रखने के लिए हिरासत गृह या मान्यता प्राप्त सामाजिक संस्थान की हिरासत में रहने के लिए अधिकृत किया जाएगा। [पैरा 94] [171-बी-ई]

9.2 पुलिस हिरासत और न्यायिक हिरासत के बीच अंतर

जब किसी व्यक्ति को पुलिस हिरासत में भेज दिया जाता है, तो वह पुलिस अधिकारियों की विशेष हिरासत में चला जाता है। अभिरक्षा पूछताछ 'जैसा कि किसी दिए गए मामले में सच्चाई का पता लगाने के लिए अपरिहार्य है, ऐसी अभिरक्षा के लिए पर्याप्त आधार है। मजिस्ट्रेट को निस्संदेह इस तरह की हिरासत में रिमांड की आवश्यकता के बारे में आश्वस्त होना चाहिए। कारणों को दर्ज किया जाना चाहिए। न्यायिक अभिरक्षा आमतौर पर जेल में अभिरक्षा होती है। इसे जेल अभिरक्षा भी कहा जाता है। इस प्रकार, जेल अभिरक्षा और न्यायिक अभिरक्षा समान हैं। जेल जेल विभाग के अंतर्गत आती हैं और उक्त विभाग के कर्मचारियों द्वारा कार्यरत होती हैं। इसलिए जेल हिरासत में व्यक्ति अप्रत्यक्ष रूप से, जेल अधिकारियों के माध्यम से, अदालत की हिरासत में है। पुलिस अधिकारी के पास किसी व्यक्ति तक पहुँच नहीं है

न्यायिक अभिरक्षा जैसा कि पुलिस अभिरक्षा में किसी व्यक्ति के मामले में उसकी होगी। जब तक अनुमति नहीं ली जाती है और प्राप्त नहीं की जाती है जो स्पष्ट रूप से ऐसी शर्तों के अधीन होगी क्योंकि अदालत न्यायिक हिरासत में व्यक्ति से पुलिस द्वारा पूछताछ नहीं की जा सकती है।

अधिकारी। अब एक मामले में, आम तौर पर, रिमांड का आदेश देने के बजाय एक व्यक्ति को जमानत पर रिहा किया जा सकता है। कि मामला बनता है या नहीं। प्रत्येक मामले के तथ्यों में तय किया जाने वाला प्रश्न है। कानून द्वारा जमानत देने के संबंध में प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं जिनका पालन किया जाना चाहिए। लेकिन अगर जमानत नहीं दी जाती है तो एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है [2021] 5 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

संज्ञेय अपराध के संबंध में पुलिस द्वारा होना चाहिए हिरासत में लिया गया। Cr.P.C की धारा 167 के पढ़ने से यह अपरिहार्य है। [पैरा 95] [171-ई-एच; 172-ए-बी]

9.3 नजरबंदी की अवधारणा हालांकि निवारक निरोध से संबंधित कानून में परिचित है, लेकिन इसके आधार हैं -

अलग-अलग। निवारक निरोध के कानून में नजरबंदी वह है जिसकी अनुमति कानून के तहत ही दी जाती है और ऐसे आदेश वास्तव में कार्यपालिका द्वारा दिए जाते हैं। दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में मौजूद नजरबंदी के तत्वों को लेते हुए, यदि यह धारा 167 के तहत पारित पाया जाता है, तो इसे उसके तहत हिरासत में लिया जाएगा। अपीलार्थी के परिसर से बाहर निकलने पर पूर्ण निषेध और आम निवासियों के अलावा अन्य व्यक्तियों के साथ बातचीत करने के खिलाफ निषेधाज्ञा के साथ इस मामले में आदेश के अनुसार नजरबंदी की अवधारणा और उसकी रक्षा करने के लिए नहीं बल्कि शर्त को लागू करने के लिए गार्ड की स्थिति अपीलार्थी को न्यायिक हिरासत में रखेगी। धारा 167 ऐसी अभिरक्षा की बात करती है जो वह उचित समझती है। यदि यह धारा 167 के तहत आदेशित पाया जाता है तो यह गिना जाएगा। [पारस 97,98] [172-जी; 173-ए-बी]

क्या मैजिस्ट्रेट/कोर्ट का विचार करता है

धारा 167 के तहत कार्रवाई के दौरान संपत्ति/विवरण की वैधता

10. अनुच्छेद 22 (1) गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को जल्द से जल्द सूचित किए बिना हिरासत में नहीं रखने का मौलिक अधिकार देता है।

ऐसी गिरफ्तारी के लिए आधार हो सकते हैं। यह हिरासत में लिए गए व्यक्ति के लिए अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी से परामर्श करने और उसका बचाव करने के मौलिक अधिकार को भी घोषित करता है। अब गिरफ्तारी के बाद हिरासत होती है। अनुच्छेद 22 (1) का संबंध इस बात से है कि निरोध को अधिकारों की पूर्ति द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए।

हैबीस निगम याचिकाओं में वरिष्ठ न्यायालयों के आदेशों के तहत ग्राहक समझौता। आईएसआईएस CR.P.C याचिकाएँ लिखने के लिए उपयुक्त है?

11.1 उच्च न्यायालय में कार्यवाही एक रिट याचिका थी। जिस समय रिट याचिका दायर की गई थी, उस समय गौतम नवलखा बनाम ने राहत मांगी थी।

धारा 167 को गिरफ्तारी के बाद ही लागू किया जाता है और गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की नजरबंदी को बढ़ाने की मांग की जाती है। हालाँकि, यह स्थिति थी जब रिट याचिका दायर की गई थी, तब तक रिट याचिका 2 बजे विचार के लिए आ गई थी: 45 आई. डी. 1 पर अपराह्न 2 बजे अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया गया: 15 अपराह्न। ऐसा प्रतीत होता है कि इस बीच, अपीलार्थी को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया जिसने पारगमन रिमांड आदेश पारित किया। इसके बाद जब मामले को 4 बजे विचार के लिए लिया गया: 00 शाम को और ट्रांजिट रिमांड को नोटिस करने पर, आदेश, दिनांक 28.08.2018, अन्य बातों के साथ-साथ, नजरबंदी का आदेश पारित किया गया। इसलिए, उस समय (शाम 4 बजे) जब आदेश पारित किया गया था, अदालत मामले पर विचार कर रही थी जब अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया गया था और ट्रांजिट रिमांड आदेश के माध्यम से रिमांड भी दिया गया था। जैसा कि पहले ही पाया जा चुका है कि उच्च न्यायालय सहित उच्च न्यायालय धारा 167 के तहत शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। विवादित फैसले में उच्च न्यायालय का निष्कर्ष इस आधार पर आगे बढ़ता प्रतीत होता है कि केवल एक मजिस्ट्रेट ही रिमांड का आदेश दे सकता है, जो सही नहीं प्रतीत होता है। [पारस 104,106,108,116] [178-बी-डी; 179-ए-बी; 181-ए]

11.2 निस्संदेह, जैसा कि अपीलार्थी ने बताया, उसे पुलिस द्वारा की गई गिरफ्तारी के आधार पर हिरासत में लिया गया था

संज्ञेय अपराधों का खुलासा करने वाली एफ. आई. आर. के संबंध में महाराष्ट्र राज्य का अधिकारी। गिरफ्तारी स्पष्ट रूप से आई. डी. 1 की धारा 48 के तहत उपलब्ध शक्तियों को ध्यान में रखते हुए की गई है। यह देखते हुए कि अपीलार्थी को महाराष्ट्र में सक्षम अदालत के समक्ष पेश करने के लिए धारा 167 के तहत एक आदेश की आवश्यकता थी, उसने अपीलार्थी को दिल्ली में निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष व्यक्तिगत रूप से पेश किया और मजिस्ट्रेट ने एक आदेश पारित किया जो धारा 167 के तहत रिमांड का आदेश है। उच्च न्यायालय रिमांड आदेश की वैधता और अपीलार्थी की नजरबंदी को लेकर चिंतित था। बंदी प्रत्यक्षीकरण की एक रिट कुछ असाधारण मामलों में होती है, यहां तक कि आदेशों [2021] 5 एस. सी. आर. को चुनौती देने के माध्यम से भी।

रिमांड का। यदि अनुच्छेद 22 (1) का पालन नहीं किया जाता है और व्यक्ति को हिरासत में लिया जाता है तो यह एक ऐसा पहलू है जिसे मजिस्ट्रेट द्वारा रिमांड का आदेश देते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। नजरबंदी गिरफ्तारी का परिणाम है। अनुच्छेद 22 (1) गिरफ्तारी के बाद इस स्तर पर लागू होता है। यदि जारी रखने के मामले में मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया जाता है निरोध, मजिस्ट्रेट से इसके प्रति बेखबर होने की अपेक्षा नहीं की जाती है। यह इस मायने में है कि उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ अनुच्छेद 22 (1) का उल्लंघन पाया है और मजिस्ट्रेट ने इसे पारगमन रिमांड को अवैध बनाने के रूप में देखा है। जहाँ तक गिरफ्तारी की जा रही है

धारा 41 (1) (बी. ए.) का उल्लंघन, निस्संदेह, यह एक ऐसा मामला है जो गिरफ्तारी की वैधता से संबंधित है जो निरोध से पहले का चरण है। उच्च न्यायालय ने पाया कि मजिस्ट्रेट ने इस सवाल पर अपना दिमाग नहीं लगाया था कि क्या गिरफ्तारी Cr.P.C की धारा 41 (1) (बीए) के अनुपालन में थी। [पैरा 117] [181-बी-एफ] गैर-का प्रभाव-जाँच एजेंसी के दौरान अपीलकर्ता के लिए अभिगम्यता

हाउस एरेस्ट और ऐप्पलेंट का प्रभाव 14.4.2020 से 25.4.2020 तक पुलिस कस्टडी में होना।

12. धारा 167 के तहत हिरासत का उद्देश्य है -

पुलिस को अभियुक्त से पूछताछ करने में सक्षम बनाना और यदि वह अवसर मौजूद नहीं है तो अभिरक्षा की ऐसी अवधि, जैसा कि कथित है, धारा 167 के उद्देश्य के लिए योग्य नहीं होगी। दूसरे शब्दों में, तर्क यह प्रतीत होता है कि धारा का उद्देश्य और योजना

167 यह है कि अभियुक्त से पूछताछ करने के अवसर के साथ एक जांच की जाती है और फिर भी यह 90 दिनों की अवधि के भीतर पूरी नहीं होती है, जिस पर डिफ़ॉल्ट जमानत का अधिकार उत्पन्न होता है। के द्वारा जब याचिका दायर की गई थी, तब उच्च न्यायालय ने ट्रांजिट रिमांड पर रोक लगा दी थी और अपीलार्थी को महाराष्ट्र नहीं ले जाया जा सका था। इसी आदेश से उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को नजरबंद कर दिया। जाँच एजेंसियों को अपीलार्थी से पूछताछ करने के लिए कोई पहुँच प्रदान नहीं की गई थी। ऐसी परिस्थितियों में, नजरबंदी के रूप में गुजरने की अवधि को बाहर रखा जाना चाहिए। तर्क यह है कि सामान्य कानून के तहत, अर्थात् यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) के तहत किए गए संशोधन के बिना, पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है और केवल पहले 15 दिनों के दौरान दी जा सकती है, इसके बाद पुलिस हिरासत नहीं दी जा सकती है। यू. ए. पी. ए. के मामले में, Cr.P.C के संशोधित अनुप्रयोग को देखते हुए।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

धारा 43 (डी) (2) के तहत 15 दिनों की अवधि बढ़ाकर 30 दिन कर दी गई है। इस प्रकार, मजिस्ट्रेट द्वारा पुलिस हिरासत को 30 दिनों की अवधि के लिए पेश किया जा सकता है। तर्क आगे यह है कि यदि यह अपीलार्थी के 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण करने के आधार पर है और अदालत के समक्ष पेश किए जाने पर, उसे पुलिस हिरासत में भेज दिया गया है, तो 90 दिनों की अवधि केवल रिमांड की तारीख यानी 15.04.2020 से चलने लगेगी। यदि अपीलार्थी का तर्क है कि रिमांड की अवधि नजरबंदी के साथ शुरू हुई है, अर्थात 28.08.2018, स्वीकार की जाती है, इसके परिणामस्वरूप 15.04.2020 पर दी गई पुलिस हिरासत अस्वीकार्य होगी। इस संबंध में, तथ्य यह है कि अपीलार्थी ने 15.04.2020 पर पुलिस हिरासत दिए जाने पर आपत्ति नहीं जताई थी

जोर दिया। अपीलार्थी 15.04.2020 से शुरू होने वाली पुलिस हिरासत में स्वीकार करता है। यह केवल इस आधार पर संभव है कि 90 दिनों की अवधि चगंती सत्यनारायण में निर्धारित कानून के संदर्भ में केवल 15.04.2020 पर शुरू होगी। [पैरा 119] [182-बी-एच; 183-ए]

चगंती सत्यनारायन और अन्य। वी. आंध्र राज्य

प्रदेश (1986) 3 एससीसी 141: [1986] 2 एससीआर 1128-निर्भर पर

13.1 कानून की योजना (Cr.P.C.) यह है कि जब किसी व्यक्ति को संज्ञेय अपराध के संबंध में वारंट के बिना गिरफ्तार किया जाता है।

अपराध, उसकी गिरफ्तारी के 24 घंटे के भीतर जांच पूरी होने की उम्मीद है। यदि जाँच पूरी नहीं होती है, जैसा कि सामान्य रूप से मामला है, तो अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना चाहिए जो गिरफ्तारी के स्थान से सबसे करीब है, भले ही उसका अधिकार क्षेत्र हो या नहीं। मजिस्ट्रेट ने अधिकारी द्वारा रखी गई केस डायरी में प्रविष्टियों के आधार से यह उम्मीद की जाती है कि वह अपना दिमाग लगाएगा और यह तय करेगा कि आरोपी को रिमांड पर लिया जाना है या नहीं। अगर पुलिस पुलिस से अनुरोध करती है

अभिरक्षा जो तब स्वीकार की जाती है, एक आदेश पारित किया जाना है और धारा 167 (3) के तहत कारण दर्ज किए जाने हैं। प्रभावी जाँच के लिए उचित मामलों में पुलिस हिरासत एक महत्वपूर्ण साधन है। इसके कई उपयोग हैं। इसमें परिस्थितियों के संदर्भ में अभियुक्त से पूछताछ करना और यदि संभावित, ऐसे बयान जो भविष्य के अभियोजन में प्रासंगिक हों।

21] 5 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कुछ मामलों में अभिरक्षा पूछताछ स्पष्ट रूप से अभियोजन और इसलिए अदालतों को एक पूरी तस्वीर देने की सख्त आवश्यकता है। अपीलार्थी का तर्क कि यह हमेशा मजिस्ट्रेट के लिए खुला है केवल न्यायिक हिरासत का आदेश देने के लिए और यहां तक कि केवल 90 दिनों की न्यायिक हिरासत के साथ, डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए एक आवेदन निहित होगा।

विवादित नहीं किया जा सकता है। हिरासत की प्रकृति जो भी हो, जब तक कि यह धारा 167 की चार दीवारों के भीतर आती है, यदि आवश्यक संख्या में दिन पुलिस/न्यायिक हिरासत/पुलिस और न्यायिक हिरासत में बिताए जाते हैं जो पर्याप्त है। [पैरा 121] [184-सी-एफ]

पुलिस अभिरक्षा प्राप्त करना दृष्टिहीन है। इसके अनुसार अपीलार्थी, नजरबंदी की अवधि को दिनांकित 28.08.2018 आदेश की शर्तों पर न्यायिक हिरासत के रूप में माना जाना है

बाद में विस्तार किया गया। जांच अधिकारी, निस्संदेह, अपीलार्थी के घर जा सकते थे और उससे पूछताछ कर सकते थे। हालाँकि, यह सच है कि यदि उच्च न्यायालय से संपर्क किया गया होता, तो उसने अपीलार्थी को इस मामले में अधिकारियों के साथ सहयोग करने का निर्देश दिया होता।

जांच पड़ताल की। हालाँकि यह अनुमान के क्षेत्र में बना हुआ है। [पैरा 122] [184-जी-एच; 185-ए]

13.3 विशेष न्यायाधीश ने 7 दिनों के लिए रिमांड का आदेश दिया। इसके बाद, पुलिस हिरासत के लिए 7 दिनों की और रिमांड की अवधि दिनांक 21.04.2020 के आदेश द्वारा दी गई थी। इसके अलावा, यह 25.04.2020 पर दिखाई देता है कि अपीलार्थी को न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया था जिसमें वह जारी रहा। सवाल यह उठेगा कि बाकी सभी का जवाब अपीलार्थी के पक्ष में दिया जा रहा है कि क्या उसका मामला है शुरू में 7 दिनों के लिए दी गई पुलिस रिमांड के साथ असंगत

15.04.2020 पर और आगे 21.04.2020 पर विस्तारित किया गया जो था,

इसमें कोई संदेह नहीं है कि 25.04.2020 को छोटा कर दें। ध्यान देने वाली बात यह है कि पुलिस हिरासत केवल 15 दिनों के लिए दी जा सकती है और वह भी आम तौर पर पहले 15 दिनों के लिए। यू. ए. पी. ए. के तहत अपराधों के आरोपी व्यक्तियों के मामले में पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि 30 दिन है। यदि अपीलार्थी के मामले को स्वीकार किया जाना है तो यह बाद की कार्यवाही के अनुरूप होना चाहिए, अर्थात्, पुलिस हिरासत दिनांक 15.04.2020 और 21.04.2020 के आदेशों के अनुसार। दूसरे शब्दों में, यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) (2) द्वारा संशोधित Cr.P.C की धारा 167, गौतम नवलखा बनाम.

इस बात पर विचार किया जाता है कि अभियुक्त को पेश करने पर पुलिस हिरासत में रिमांड केवल पेश करने की तारीख से पहले 30 दिनों के दौरान दी जा सकती है और यह प्रतिवादी के मामले को आगे बढ़ाता है कि विशेष न्यायाधीश के समक्ष अभियुक्त को पेश करने पर रिमांड केवल 15.04.2020 पर अभियुक्त को पेश करने के साथ हुई थी। यदि अपीलार्थी के मामले में रिमांड वर्ष में हुई थी 2018 तब यह वर्ष 2018 में रिमांड के पहले 30 दिनों के बाद भी पुलिस हिरासत में रिमांड के साथ पूरी तरह से असंगत होगा। [पैरा 124] [185-सी-एफ]

13.4 अपीलार्थी का उत्तर यह है कि इसके अलावा

15 दिनों की अवधि के बाद यू. ए. पी. ए. के तहत 30 दिनों के लिए पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है और यू. ए. पी. ए. से जुड़े मामलों में किसी भी समय दी जा सकती है। यह एक सांस में अपीलार्थी का मामला प्रतीत होता है कि यह धारा में विचार किए गए दूसरे परंतुक के तहत संभव है

43 (2) (ख) यू. ए. पी. ए. यह तर्क दिया जाता है कि आम तौर पर Cr.P.C द्वारा कवर किए गए मामलों के विपरीत, यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में किसी भी समय पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है। हालाँकि, यह भी तर्क दिया जाता है कि केवल तभी जब कोई व्यक्ति न्यायिक हिरासत में है और जांचकर्ता न्यायिक हिरासत के स्थान पर पुलिस हिरासत प्राप्त करना चाहता है, तो एक हलफनामे की आवश्यकता होती है। इस मामले में, यह अपीलार्थी का मामला है कि ऐसा कोई शपथ पत्र नहीं है। यही कारण है कि जब 15.04.2020 पर पुलिस हिरासत की मांग की गई थी, तो अपीलार्थी न्यायिक हिरासत में नहीं था। उसने पिछले दिन एन. आई. ए. के सामने आत्मसमर्पण कर दिया था। इसलिए इस विवाद को हल करने के लिए यह पता लगाना आवश्यक है कि क्या

अपीलकर्ता कि यू. ए. पी. ए. के तहत आने वाले मामलों में किसी भी समय पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है, मान्य है। [पैरा 125] [185-जी-एच; 186-ए-बी] 14. धारा 43 (डी) (2) (ए) के तहत यह स्पष्ट है कि पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि जो अनुमेय है, बढ़ा दी गई है।

15 दिन से 30 दिन तक। अगला संशोधन वह है जो प्रासंगिक है जिसे दूसरे परंतुक में शामिल किया गया है। यह.

यह विचार करता है कि जाँच अधिकारी कारणों के साथ न्यायिक हिरासत में किसी व्यक्ति की पुलिस हिरासत प्राप्त करने में देरी की व्याख्या कर सकता है। [पैरा 127] [186-जी]

15. निस्संदेह, 30 दिनों की अवधि की अनुमति है

पुलिस हिरासत का तरीका। यह न्यायालय इस आधार पर आगे बढ़ेगा कि [2021] 5 एस. सी. आर.

विधायिका जब कानून में बदलाव लाती है तो वह मौजूदा कानून से अवगत होती है। दूसरे शब्दों में, इस न्यायालय ने अनुपम कुलकर्णी में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह निर्धारित किया था कि धारा 167 के तहत -

पुलिस अभिरक्षा की अधिकतम अवधि के रूप में 15 दिनों का प्रावधान है, पुलिस के साथ एक आरोपी की अभिरक्षा मजिस्ट्रेट द्वारा अभिरक्षा की तारीख से पहले 15 दिनों के दौरान ही दी जा सकती है। 15 दिन के बाद, रिमांड केवल न्यायिक हिरासत में दी जा सकती है। आम तौर पर, चूंकि 15 दिनों की अवधि को बढ़ाकर 30 दिन कर दिया गया है, इसलिए प्रभाव यह होगा कि यू. ए. पी. ए. के तहत आने वाले मामलों में अनुपम कुलकर्णी में घोषित सिद्धांत को लागू किया जाए। , जाँच

यू. ए. पी. ए. के तहत एक मामले में अधिकारी को पुलिस हिरासत मिल सकती है

अधिकतम 30 दिनों की अवधि लेकिन यह रिमांड के पहले 30 दिनों के भीतर होनी चाहिए। इस संबंध में, केवल पुलिस हिरासत को रिमांड देने के लिए दिनों की संख्या बढ़ाई गई है। यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में इस सिद्धांत में कोई बदलाव नहीं किया गया है कि यह पहले 30 दिन होना चाहिए। [पैरा 128] [187-ए-डी]

16. जहां तक धारा 43 (डी) (2) (बी) में दूसरे परंतुक का संबंध है, यह अनुपम में कानून में बदलाव लाता है।

कुलकर्णी। यह विचार किया जाता है कि एक व्यक्ति जिसे न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया है और एन. आई. ए. को पहले 30 दिनों के दौरान पुलिस हिरासत नहीं दी गई है, कारणों को दिए जाने पर और देरी को समझाने पर भी, अदालत पुलिस हिरासत दे सकती है। परंतुक कानून में इस हद तक बदलाव लाता है कि यदि कोई व्यक्ति रिमांड के आधार पर न्यायिक हिरासत में है, तो दिए गए कारणों पर, देरी को समझाते हुए, अदालत को पहली रिमांड की तारीख से 30 दिनों से भी अधिक समय तक पुलिस हिरासत देने का अधिकार है।

[पैरा 128] [187-डी-ई] 17. इस संबंध में, ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण कर दिया था। वह न्यायिक हिरासत में नहीं था। वह.

15.04.2020 पर पुलिस हिरासत की मांग करने वाली रिमांड रिपोर्ट के साथ पेश किया गया था। इसे पहले 30 दिनों के भीतर मांगी गई रिमांड के रूप में मानते हुए, शुरू में 7 दिनों की अवधि के लिए रिमांड का आदेश दिया जाता है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि यह अवधि पुलिस हिरासत में थी। यू. ए. पी. ए. के तहत एक आरोपी को न्यायिक हिरासत, पुलिस हिरासत या जमानत दी जा सकती है। यदि यह तर्क कि पुलिस अभिरक्षा किसी भी समय मांगी जा सकती है और यह उन मामलों तक सीमित नहीं है जहां न्यायिक अभिरक्षा है, गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

यह परंतुक की स्पष्ट शर्तों और यहां तक कि एक व्यक्ति के खिलाफ जाएगा। जिसे जमानत पर रिहा किया जाता है, उसे 30 दिनों के बाद पुलिस हिरासत में भेजा जा सकता है। यह असहनीय है। अपीलार्थी का मामला कि 15.04.2020 पर दी गई पुलिस हिरासत अनुमेय और इसके अनुरूप थी

उसका मामला सही नहीं लगता है। [पैरा 128] [187-एफ-एच; 188-ए-बी]

परिस्थितियाँ जो फिर से विद्रोह करती हैं

गृह आगमन का आदेश धारा 167 के तहत एक होना।

18. उच्च न्यायालय ने रिट याचिका पर विचार किया

28.08.2018 . इसका इरादा अगले ही दिन मामले को निपटाने का था। ऐसी परिस्थितियों में नजरबंदी का आदेश पारित किया गया था। लेकिन हिरासत थी और इससे भी ज्यादा, यह 34 दिनों तक चली। उच्च न्यायालय केस डायरी में प्रविष्टियों को देखने में असमर्थ था क्योंकि प्रविष्टियां मराठी भाषा में थीं। वास्तव में, अदालत दस्तावेजों से यह पता लगाने में असमर्थता व्यक्त करती है कि अपीलार्थी के खिलाफ मामला वास्तव में क्या था। दस्तावेज़ों का अनुवाद अगले दिन उपलब्ध कराया जाना था। अनुवाद उपलब्ध नहीं कराए गए थे। फिर भी 28.08.2018 पर अगले आदेश तक नजरबंदी का आदेश दिया गया था। प्रासंगिक बात यह है कि कार्यवाहक मजिस्ट्रेट पर लागू कानून के मानकों के अनुसार

धारा 167 के तहत, उच्च न्यायालय धारा 167 के तहत कार्रवाई करने का इरादा नहीं रखता था। यह कहने से अलग है कि इसने कानून के जनादेश का उल्लंघन किया। यह सच है कि जांच पर कोई रोक नहीं थी। हालांकि, जिसे चुनौती दी गई थी वह ट्रांजिट रिमांड थी। प्राथमिकी दूसरे राज्य में दर्ज की गई थी।

अपीलार्थी से पूछताछ जाँच का अभिन्न अंग होगा। नजरबंदी के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा लगाई गई शर्तों पर इस तरह की पूछताछ करना संभव नहीं था। ऐसा प्रतीत होता है कि दलों ने उस पर विचार नहीं किया जैसा कि वर्तमान में प्रस्तावित है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रतिवादी उच्च न्यायालय का रुख कर सकता था। अपीलार्थी के अनुसार नजरबंदी रिमांड के आदेश में संशोधन के माध्यम से की जाती है। में।

दूसरे शब्दों में, तर्क यह है कि उच्च न्यायालय ने पारगमन पर रोक लगा दी। लेकिन जब उच्च न्यायालय ने 28.08.2018 पर नजरबंदी का आदेश पारित किया, तो उसने रिमांड को पुलिस हिरासत से घर में नजरबंदी में बदल दिया। इसके बाद हम [2021] 5 एस. सी. आर. के आधार पर आगे बढ़ते हैं।

जो दो दिन तक चलने वाला था। लेकिन अंतरिम आदेश द्वारा उच्च न्यायालय द्वारा आदेशित नजरबंदी के आधार पर अपीलार्थी को 34 दिनों के लिए नजरबंद किया गया। दिल्ली उच्च न्यायालय ने दिनांक 1 के फैसले से पारगमन रिमांड को रद्द कर दिया, क्योंकि मजिस्ट्रेट द्वारा आदेशित पारगमन रिमांड को अवैध पाया गया था। उक्त आधार पर दिल्ली उच्च न्यायालय ने पाया कि 24 घंटे से अधिक की हिरासत स्पष्ट रूप से अस्वीकार्य थी। अब यह ध्यान देने योग्य है कि सीएमएम साकेत ने 30.08.2018 के बाद की अवधि के लिए हिरासत का आदेश नहीं दिया था। उसके द्वारा केवल दो दिनों के लिए नजरबंदी का आदेश दिया गया था और अपीलार्थी को 30.08.2018 पर पेश किया जाना था। दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश से पारगमन प्रभावी नहीं हो सका। इसलिए, 30.08.2018 के बाद की पूरी अवधि

01.10.2018 मजिस्ट्रेट के आदेश पर आधारित नहीं कहा जा सकता है। उक्त अवधि वास्तव में नजरबंदी के आदेश द्वारा कवर की जाती है। उच्च न्यायालय के आदेश के आधार पर नजरबंदी की अवधि 28.08.2018 से शुरू हुई। गिरफ्तारी 28.08.2018 पर 2.15PM पर की गई थी। सी. एम. एम. का आदेश अगले एक घंटे के भीतर पारित कर दिया गया। उच्च न्यायालय का आदेश लगभग 4.30PM पर पारित किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह मजिस्ट्रेट का आदेश है जिसने धारा 167 के तहत रिमांड की शुरुआत की थी।

पुलिस हिरासत। दिल्ली उच्च न्यायालय ने पाया कि मजिस्ट्रेट द्वारा एक वैध रिमांड आदेश के समर्थन के बिना, निरोध 24 घंटे से अधिक हो गया, जिससे यह कानून में असमर्थनीय हो गया और आगे का निष्कर्ष यह है कि परिणामस्वरूप नजरबंदी तब तक समाप्त हो गई (01.10.2018)। इसलिए, उच्च न्यायालय ने नजरबंदी का फैसला सुनाने के लिए आगे नहीं बढ़ा क्योंकि

गैर-कानूनी या अवैध। दूसरी ओर, जब इसका उच्चारण किया जाता है, तो यह 01.10.2018 पर समाप्त हो गया है और इसका कोई भी हिस्सा अवैध नहीं पाया गया है, इसका मतलब है कि यह उस समय से मान्य था जब इसे 01.10.2018 तक पारित किया गया था। यदि इसे धारा 167 के तहत पारित आदेश के रूप में माना जाता है तो गिरफ्तारी के 24 घंटे से आगे कोई हिरासत नहीं होगी जो अवैध हो सकती है। निरोध की अवैधता पारगमन आदेश को अवैध पाए जाने पर आधारित है। यदि पारगमन आदेश को संशोधित किया गया है जैसा कि अपीलार्थी द्वारा दावा किया गया है, तो निरोध वैध होगा क्योंकि गिरफ्तारी के 24 घंटों के भीतर नजरबंदी का आदेश पारित कर दिया जाता है।

मूलभूत आदेश, पारगमन रिमांड, को दरकिनार किए जाने पर यह कहा जा सकता है कि अंतरिम आदेश नहीं बचेगा। लेकिन तब आदेश को उच्च न्यायालय को इस तरह से समझना चाहिए था। निस्संदेह, अपीलार्थी को 15.04.2020 से 25.04.2020 तक पुलिस हिरासत में रखा गया था। यहां तक कि पुलिस की 30 दिनों की बढ़ी हुई अवधि भी यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) (2) के तहत अनुमेय अभिरक्षा, अभिरक्षा के पहले 30 दिनों के भीतर प्राप्त की जानी चाहिए। अपीलार्थी के मामले के आधार पर कार्यवाही करते हुए कि पहली रिमांड 28.08.2018 पर हुई थी, अपीलार्थी का 2020 में 11 दिनों की अवधि के लिए पुलिस हिरासत में होना अपीलार्थी के मामले और कानून के साथ असंगत है। हालाँकि यू. ए. पी. ए. के तहत धारा 43 (डी) (2) के दूसरे प्रावधान के तहत पहले 30 दिनों से आगे पुलिस हिरासत में रखा जा सकता है, लेकिन इसकी अनुमति केवल ऐसी स्थिति में दी जाती है जहां आरोपी न्यायिक हिरासत में हो।

अभिरक्षा। अपीलार्थी, निश्चित रूप से, न्यायिक हिरासत में नहीं था, जिसने एन. आई. ए. के समक्ष 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण किया था, जो पुलिस हिरासत का निर्देश देने वाले पहले आदेश की पूर्व संध्या पर है। इनमें से एक

प्रत्यर्थी द्वारा उठाई गई दलीलें यह हैं कि यदि धारा 167 Cr.PC के तहत नजरबंदी का आदेश पारित किया गया था, तो दिल्ली उच्च न्यायालय ने पारगमन रिमांड को रद्द करने के बाद या तो अपीलार्थी को जमानत पर रिहा कर दिया होगा या उसे हिरासत में भेज दिया होगा। इसके बजाय, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को इस आधार पर रिहा कर दिया कि चूंकि रिमांड आदेश अवैध था और अलग रखा गया था, इसलिए धारा 56 और धारा 57 को देखते हुए 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में नहीं रखा जा सकता है। अब धारा 167 के तहत एक कार्यवाही में जहां एक उच्च न्यायालय के समक्ष रिमांड आदेश जारी किया जाता है, यह एक संज्ञेय अपराध के संबंध में गिरफ्तारी। अब यदि उच्च न्यायालय द्वारा रिमांड को दरकिनार कर दिया जाता है, जो धारा 167 के तहत रिमांड से उत्पन्न हुई कार्यवाही में, तो रिमांड को दरकिनार करने पर जो आदेश आएगा, वह उसे जमानत देना या रिमांड में संशोधन करना होगा। यही कारण है कि एक गिरफ्तारी होती है जो पहले गेंद को लुढ़कने के लिए सेट करती है। इसलिए, उसे या तो जमानत पर रिहा करना होगा, नहीं तो उसे रिमांड पर लेना होगा। [पैरा 131] [189-सी-एच; 190-ए-एच; 191-ए-एच; 192-ए-डी]

19. इस प्रस्ताव के साथ कोई झगड़ा नहीं हो सकता है कि अदालत किसी व्यक्ति को तब तक रिमांड पर नहीं ले सकती जब तक कि अदालत ऐसा करने के लिए अधिकृत न हो [2021] 5 एस. सी. आर.

कानून द्वारा। हालाँकि, हम इस मामले में नजरबंदी की वैधता पर अपील में नहीं बैठे हैं। लेकिन हम यहां यह पता लगाने के लिए हैं कि क्या नजरबंदी धारा 167 के तहत आती है। इस मामले के तथ्यों में, धारा 167 के तहत नजरबंदी का आदेश नहीं दिया गया था। इसे धारा 167 के तहत पारित किया गया नहीं माना जा सकता है। धारा 167 के तहत हिरासत के हिस्से के रूप में नजरबंदी की अवधारणा ने इस न्यायालय सहित अदालतों को शामिल नहीं किया है। हालाँकि, जब यह मुद्दा ध्यान में आया है, और इसके घटकों को देखते हुए हमने यह विचार बनाया है कि इसमें हिरासत शामिल है जो धारा 167 के तहत आती है। उपयुक्त मामलों में धारा 167 के तहत अदालतें नजरबंदी का आदेश दे सकती हैं। जहां तक इसके नियोजन का संबंध है, बिना विस्तृत किए, हम आयु, स्वास्थ्य स्थिति और अभियुक्त की पृष्ठभूमि, अपराध की प्रकृति, हिरासत के अन्य रूपों की आवश्यकता और नजरबंदी की शर्तों को लागू करने की क्षमता जैसे मानदंडों का संकेत दे सकते हैं। धारा 309 के तहत यह भी कि न्यायिक हिरासत का आदेश दिए जाने के कारण, मानदंडों का पालन करने के अधीन, अदालतें इसे योग्य और उपयुक्त मामलों में नियुक्त करने के लिए स्वतंत्र होंगी। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी की नजरबंदी धारा 167 के तहत नहीं थी और नहीं हो सकती इसके तहत पारित के रूप में माना जाए। [पारस 136,138,139,140] [195-बी-जी]

ललिता कुमारी बनाम। उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य (2014) 2 एस. सी. सी. 1: [2013] 14 एस. सी. आर. 713; बिक्रमजीत सिंह बनाम। पंजाब राज्य (2020) 10 एस. सी. सी. 616 -

पर।

254 ; री में। एम. आर. वेंकटरमन और अन्य ए. आई. आर. 1948 मैड 100; मामला: मधु लिमये और अन्य (1969) 1 एस. सी. सी. 292: [1969] 3 एस. सी. आर. 154; अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य और दूसरा (2014) 8 एस. सी. सी. 273: [2014] 8 एस. सी. आर. 128; पश्चिम बंगाल राज्य बनाम दिनेश डालमिया (2007) 5 एस. सी. 773 [2007] 5 एस. सी. आर. 561; निरंजन सिंह और अन्र। वी. प्रभाकर राजाराम खरोटे और अन्य। (1980) 2

एस. सी. सी. 559 [1980] 3 एस. सी. आर. 15-संदर्भित।

बुज़ादजी बनाम। मोल्डोवा 398 बटरवर्थ्स मानवाधिकार

42 मामले निर्दिष्ट किए गए हैं।

— गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी

मामला कानून संदर्भ

[2018] 11 एससीआर 951

पै

रा 4

संदर्भित किया गया है

[1986] 2 एससीआर 1128

उस पर भरोसा करें

पै

रा 9

[2013] 14 एससीआर 713

संदर्भित किया गया है

पै

रा 22

[1953] एससीआर 254

संदर्भित किया गया है

पै

रा 26

[1962] पूरक। एससीआर 915

पै

रा 28

संदर्भित किया गया है

[1985] पूरक। एससीआर 83

उस पर भरोसा करें

पै

रा 44

[1982] 2 एससीआर 272

पीछा किया।

पै

रा 44

[1978] 2 एससीआर 621

उस पर भरोसा करें

पै

रा 51

[2004] 2 पूरक। एससीआर 71

उस पर भरोसा करें

पै

रा 56

[1992] 3 एससीआर 158

उस पर भरोसा करें

पै

रा 58

[2012] 8 एससीआर 993

उस पर भरोसा करें

पै

रा 61

[2019] 5 एससीआर 91

उस पर भरोसा करें

पै

रा 62

[1977] 3 एससीआर 7

पै

रा 83

उस पर भरोसा करें

[1987] 3 एससीआर 84

पै

रा 84

संदर्भित किया गया है

[1969] 3 एससीआर 154

संदर्भित किया गया है

पै

रा 101

[2014] 8 एससीआर 128

संदर्भित किया गया है

पै

रा 102

[2007] 5 एससीआर 561

संदर्भित किया गया है

पै

रा 129

[1980] 3 एससीआर 15

पै

रा 129

संदर्भित किया गया है

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय: आपराधिक अपील

2021 का सं. 510।

उच्च न्यायालय के 08.02.2021 दिनांकित निर्णय और आदेश से

2020 की आपराधिक अपील डाक टिकट संख्या 1707 में बॉम्बे में न्यायिक कार्य।

कपिल सिब्बल, सुश्री नित्या रामकृष्णन, वरिष्ठ अधिवक्ता। , सुश्री वारिशा

फरासत, शादान फरासत, निजाम पाशा, शौर्य दासगुप्ता, सुश्री हफ्सा खान, भरत गुप्ता, अधिवक्ता। अपीलार्थी के लिए।

एस. वी. राजू, एएसजी। , सुश्री साइरिका राजू, गुंटूर प्रमोद कुमार, बी. वी.

बलराम दास, अधिवक्ता। उत्तरदाता के लिए।

21] 5 एस सी आर।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

के. एम. जोसेफ, जे.

1. छुट्टी दे दी गई।

2. 2018 की एफ. आई. आर. संख्या 4 दिनांक 08.01.2018 के आधार पर, पंजीकृत किया गया

विश्रामबाग पुलिस स्टेशन, पुणे, महाराष्ट्र में, जो आई. पी. सी. की धारा 153 ए, 505 (1 बी) और धारा 34 के तहत पंजीकृत था, जिसमें धारा 120 (बी) को <आई. डी. 1 पर जोड़ा गया था और अभी भी इसमें, गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम, 1967 की धारा 13,16,17,18,18 बी, 20,38 और 40 (इसके बाद संक्षेप में 'यू. ए. पी. ए.' के रूप में संदर्भित) को <आई. डी. 3 पर जोड़ा गया था, और जिसमें एफ. आई. आर., अपीलार्थी का नाम <आई. डी. 2 पर जोड़ा गया था, अपीलार्थी को दिल्ली में उसके आवास से 28.08.2018 पर गिरफ्तार किया गया था। अपीलार्थी ने दिल्ली उच्च न्यायालय में बंदी प्रत्यक्षीकरण के रिट की मांग करते हुए 2018 की रिट याचिका संख्या 2559 दायर की। उच्च न्यायालय ने नोटिस जारी करने के अलावा, अन्य बातों के साथ-साथ आदेश दिया कि जब तक मामला 04 बजे नहीं लिया जाता, तब तक अपीलार्थी को दिल्ली से हटाने की कोई त्वरित कार्रवाई नहीं की जाएगी: 00 पी. एम. आदेश 02 बजे पारित किया गया था: 45 पी. एम. इस बीच, दिल्ली के साकेत में सी. एम. एम. ने निम्नलिखित आदेश के साथ ट्रांजिट रिमांड की मांग करने वाले एक आवेदन का निपटारा किया:

" एफ. आई. आर. सं. 4/18 पीएस: विश्रामबाग, पुणे, महाराष्ट्र

यू/एस: 153 ए/505 (1) (बी)/117/34 1 पीसी और गैरकानूनी गतिविधि रोकथाम अधिनियम की धारा 13/15/17/18/185/20/39/40 के तहत।

राज्य बनाम गौतम प्रताप नवलखा

28.08.2018

वर्तमान: एस. जगदम्बा पांडे, एल. डी. राज्य के लिए ऐप

आई. ओ. सहायक पुलिस निरीक्षक सुशील वी. बोबडे

एसीपी गणेश गावडे और डीसीपी बच्चन सिंह इंस्पेक्टर

संजय गुप्ता, पीएस स्पेशल सेल, लोधी कॉलोनी, नई दिल्ली।

आरोपी गौतम प्रताप नवलखा को पुलिस हिरासत में पेश किया गया।

एस. ओम प्रकाश, एल. डी. अभियुक्त के लिए एल. ए. सी.।

यह 10 सहायक द्वारा पसंद किया जाने वाला एक हस्तलिखित आवेदन है।

पुलिस निरीक्षक सुशील वी. बोडबे ने दो लोगों की ट्रांजिट रिमांड की मांग की

उपरोक्त उल्लिखित अभियुक्त व्यक्तियों को निर्दिष्ट करता है। गौतम नवलखा बनाम के रूप में 10 की पहचान।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

पी विश्रामबाग, पुणे, महाराष्ट्र के पुलिस अधिकारी की स्थापना की गई है।

अपना पहचान पत्र दिखाने पर मेरी संतुष्टि तक।

सुना है। आई. ओ. द्वारा प्रस्तुत किया जाता है कि उपर्युक्त अभियुक्त

पीएस विश्रामबाग में दर्ज उपरोक्त मामले में आवश्यक एफ. आई. आर.,

पुणे, महाराष्ट्र और उसे उसके घर से गिरफ्तार किया गया है कालकाजी, दिल्ली। आई. ओ. द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया जाता है कि अभियुक्त

बिना वारंट के गिरफ्तार किया गया है और उसे पेश करने की आवश्यकता है

नगर, पुणे, महाराष्ट्र और इसलिए, उसकी पारगमन रिमांड हो सकती है। दिया जाता है।

सुना है। माना जाता है। मैंने अपना विचारशील विचार दिया है। राज्य के लिए आई. ओ. और ए. पी. पी. द्वारा की गई प्रस्तुतियों के लिए।

पुलिस के दस्तावेजों के अनुसार, एफ. आई. आर. संख्या 4/18 के तहत दर्ज किया गया है।

आई. पी. सी. की धारा 153ए/505 (1) (बी)/117/34 और यू/एस 13/16/17/18/18बी/20 /

गिरफ्तारी ज्ञापन के अनुसार आरोपी का नाम गौतम प्रताप है नवलखा को 28.08.2018 पर गिरफ्तार किया गया था। 2.15 दिल्ली के कालकजल में दोपहर।

अभियुक्त की गिरफ्तारी की सूचना उसके साथी/साथी को दी गई है।

दोस्त।

इसलिए, उसकी ट्रांजिट रिमांड 30.08.2018 तक दी जाती है। अभियुक्त ने संबंधित एल. डी. के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। विशेष न्यायालय, शिवाजी

नगर, पुणे, महाराष्ट्र 30.08.2018 पर या उससे पहले। नियमों और निर्देशों के अनुसार आरोपी की चिकित्सकीय जांच कराई जाए

माननीय सर्वोच्च न्यायालय से। इस आदेश की एक प्रति दस्ती दी जाए।

जाँच अधिकारी को।

ट्रांजिट रिमांड के आवेदन का तदनुसार निपटारा किया जाता है।

अहलमद द्वारा आवश्यक अभिलेख बनाए रखा जाए।

(मनीष खुराना)

आयुक्त/एस. ई./जिला न्यायालय, साकेत

नई दिल्ली1/28.08.2018 "

3. इसके बाद, जब अपीलार्थी द्वारा पूर्व में दायर रिट याचिका

आह् कोर्ट, 04.00 शाम को आया, उच्च न्यायालय ने पारित किया

28.08.2018 पर विंग आदेशः

" 2. राज्य के जाने-माने स्थायी वकील श्री राहुल मेहरा ने शाम 4 बजे अदालत को सूचित किया कि दक्षिण पूर्व जिले, साकेत के जाने-माने मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट (सीएमएम) द्वारा दोपहर के भोजन के बाद के सत्र में याचिकाकर्ता को विशेष अदालत के समक्ष पेश करने के लिए ट्रांजिट रिमांड देने का आदेश आज पारित किया गया।

शिवाजी नगर, पुणे 30 अगस्त, 2018 को या उससे पहले।

3. अदालत को विद्वान सी. एम. एम. के समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेज भी दिखाए जाते हैं, जिनमें से अधिकांश (पुलिस स्टेशन विश्रामबाग, पुणे में दर्ज 2018 की एफ. आई. आर. संख्या 4 सहित) मराठी भाषा में हैं और केवल ट्रांजिट रिमांड के लिए दायर आवेदन हैं।

सी. एम. एम. हिंदी में है। हालांकि, इन दस्तावेजों से यह पता लगाना संभव नहीं है कि उनके खिलाफ क्या मामला है। याचिकाकर्ता है।

4. चूंकि यह पहले से ही शाम 4:30 बजे है, इसलिए अदालत यह निर्देश देना उचित समझती है कि विद्वान सीएमएम के 28 अगस्त, 2018 के आदेश के अनुसार, याचिकाकर्ता को दिल्ली से नहीं ले जाया जाएगा और इस मामले को कल सुबह पहले मामले के रूप में लिया जाएगा।

5.सी. एम. एम. के समक्ष प्रस्तुत किए गए सभी दस्तावेजों का अनुवाद

कल इस न्यायालय को प्रदान किया गया।

6. इस बीच, याचिकाकर्ता को उसी स्थान पर रखा जाएगा जहां से उसे विशेष प्रकोष्ठ, दिल्ली पुलिस के दो गार्डों के साथ स्थानीय पुलिस के साथ उठाया गया था, जो मूल रूप से याचिकाकर्ता को गिरफ्तार करने के लिए यहां आई थी। अपने वकीलों और घर के आम निवासियों को छोड़कर, याचिकाकर्ता आगे तक किसी अन्य व्यक्ति से नहीं मिलेगा या परिसर से बाहर नहीं निकलेगा।

आदेश "।

4. अगले दिन सुप्रीम कोर्ट में 2018 की रिट याचिका (आपराधिक) डायरी संख्या 32319 के रूप में एक रिट याचिका दायर की गई थी। यह रिट याचिका अपने स्वयं के क्षेत्रों में पाँच प्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा दायर की गई थी, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा निर्णय में कहा गया है, जो रोमिला थापर और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य में रिपोर्ट किया गया है। रिट याचिका का विषय महाराष्ट्र पुलिस की कथित रूप से उच्च-स्तरीय कार्रवाई और पांच कार्यकर्ताओं की गिरफ्तारी थी, जिसमें अपीलार्थी को उनके घरों से 28.08.2018 पर गिरफ्तार किया गया था। रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा मांगी गई राहत पांच मानवाधिकार कार्यकर्ताओं की गिरफ्तारी की विश्वसनीय जांच सुनिश्चित करने के लिए थी।

1 (2018) 10 एस. सी. सी. 753 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

इस न्यायालय द्वारा रिट याचिका में अंतरिम आदेश पारित किए गए थे, जिसके तहत, अपीलार्थी की नजरबंदी का लाभ, अन्य बातों के साथ-साथ, अन्य लोगों को भी देने का आदेश दिया गया था। अपीलार्थी के नजरबंदी के आदेश को बढ़ा दिया गया। इस न्यायालय में दायर रिट याचिका में एक स्वतंत्र जांच के लिए मांगी गई राहत को अधिकांश न्यायाधीशों द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिसमें डॉ. डी. वाई. चंद्रचूड़, जे. ने असहमति जताई थी। हम पैराग्राफ 40 पर ध्यान देते हैं, जो इस प्रकार है:

" 40. तदनुसार, इस रिट याचिका का निपटारा संबंधित अभियुक्त को उचित उपचार का सहारा लेने की स्वतंत्रता के साथ किया जाता है।

जो कानून में अनुज्ञेय हो। इस न्यायालय द्वारा 29-8-2018 (रोमिला थापर बनाम। भारत संघ, 2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1343) चार सप्ताह की अवधि के लिए जारी रहेगा ताकि आरोपी संबंधित अदालत का रुख कर सके। उक्त कार्यवाहियों का निर्णय इस निर्णय में किए गए किसी भी अवलोकन से अप्रभावित अपने गुण-दोष पर किया जाएगा, जो इस तक सीमित है -

जांच को एक स्वतंत्र जांच एजेंसी और/या अदालत की निगरानी वाली जांच में स्थानांतरित करने के लिए रिट याचिका में दावा की गई राहत। जाँच अधिकारी उसके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है।

कानून के अनुसार संबंधित अभियुक्त। साथ में सभी

इस निर्णय के संदर्भ में आवेदनों का भी निपटारा किया जाता है।

5. यह निर्णय इस न्यायालय द्वारा 28.09.2018 पर दिया गया था। इसके बाद, दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा दायर रिट याचिका को अनुमति दी गई। हम तुरंत ध्यान दे सकते हैं कि रिट याचिका में मांगी गई राहत शुरू में बंदी प्रत्यक्षीकरण के रिट की मांग थी।

इसके बाद, अदालत सी. एम. एम. द्वारा पारित पारगमन रिमांड के आदेश की वैधता से चिंतित हो गई, जिसे हमने स्वीकार किया है। हम केवल अनुच्छेद-28 और 29,30 और 31 दिनांकित 01.10.2018 पर ध्यान दे सकते हैं:

" 28. संविधान के अनुच्छेद 22 (1), अनुच्छेद 22 (2) और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 57 और 41 (1) (बी. ए.) के साथ पठित धारा 167 की अनिवार्य आवश्यकता के कई गैर-अनुपालन होने के कारण, जो प्रकृति में अनिवार्य हैं, इस न्यायालय के लिए यह स्पष्ट है कि 28 अगस्त, 2018 को विद्वान सी. एम. एम. द्वारा याचिकाकर्ता को पारगमन रिमांड देने का आदेश पारित किया गया था, जो कानून में टिकाऊ नहीं है। ने कहा कि

तदनुसार आदेश को अलग रखा जाता है।

29. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 57 के साथ पठित धारा 56 को ध्यान में रखते हुए, विद्वान सी. एम. एम. के रिमांड आदेश के अभाव में, निरोध [2021] 5 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

याचिकाकर्ता का, जो स्पष्ट रूप से 24 घंटे से अधिक हो गया है, फिर से है

30. यह स्पष्ट किया जाता है कि यह आदेश राज्य को बाधित नहीं करेगा महाराष्ट्र कानून के अनुसार आगे बढ़ने से।

31. इस स्तर पर, श्री नवारे प्रस्तुत करते हैं कि इस न्यायालय को विस्तार करना चाहिए

याचिकाकर्ता को दो और दिनों के लिए नजरबंद किया गया

उच्चतम न्यायालय ने स्वयं उनकी नजरबंदी को चार सप्ताह के लिए बढ़ा दिया था।

यह निवेदन इस तथ्य की अनदेखी करता है कि सर्वोच्च न्यायालय ने

याचिकाकर्ता की नजरबंदी केवल उसे सक्षम करने के लिए बढ़ाई गई उन उपायों का लाभ उठाने के लिए जो उसके अनुसार अनुमेय थे

कानून के साथ। जहाँ तक वर्तमान याचिकाकर्ता का संबंध है, तथ्य कि उनके द्वारा दायर यह रिट याचिका पहले से ही लंबित थी

न्यायालय, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नोटिस किया गया था और यह स्पष्ट किया गया था

कि वह दूसरों के बीच इस उपाय को आगे बढ़ाने के लिए स्वतंत्र है कानून के साथ। सुप्रीम द्वारा उनकी नजरबंदी का विस्तार किया गया था

केवल उस सीमित उद्देश्य के लिए। नतीजतन, यह न्यायालय असमर्थ है श्री नवारे के अनुरोध को स्वीकार करें।

(जोर दिया गया)

6. अपीलार्थी ने 2018 की रिट याचिका संख्या 4425 दिनांकित दायर की

05.10.2018 एफ. आई. आर. को रद्द करने के लिए। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को संरक्षण दिया

उक्त रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान गिरफ्तारी से। अपीलार्थी के सह-अभियुक्त के खिलाफ 15.11.2018 पर आरोप पत्र दायर किया गया था। फिर, इसके बाद 21.02.2019 पर सह-अभियुक्त के खिलाफ एक पूरक आरोप पत्र दायर किया जाता है। 13.09.2019 पर, बॉम्बे के उच्च न्यायालय ने प्राथमिकी के खिलाफ अपीलार्थी द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया। हालाँकि, गिरफ्तारी से अंतरिम संरक्षण को तीन सप्ताह के लिए बढ़ा दिया गया था। अपीलार्थी द्वारा 2019 की एस. एल. पी. (आपराधिक) संख्या 8862 के रूप में दायर विशेष अनुमति याचिका का निपटान

अपीलार्थी के अनुरोध को स्वीकार करते हुए किया गया कि अपीलार्थी सक्षम न्यायालय के समक्ष अग्रिम जमानत के लिए आवेदन कर सकता है। न्यायालय ने अंतरिम संरक्षण का विस्तार किया, जो अपीलार्थी को दिया गया था चार सप्ताह की एक और अवधि, 15.10.2019 से और उन्हें नियमित/अग्रिम जमानत के लिए आवेदन करने की स्वतंत्रता दी गई। अग्रिम जमानत की मांग करने वाली याचिका को सत्र न्यायालय ने दिनांकित आदेश द्वारा खारिज कर दिया

12.11.2019 .

7. अपीलार्थी ने बंबई उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया

अग्रिम जमानत, जिसे 14.02.2020 दिनांकित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

हालांकि, उच्च न्यायालय ने चार सप्ताह के लिए गिरफ्तारी से सुरक्षा प्रदान की। उच्च न्यायालय द्वारा आदेश को चुनौती देते हुए दायर विशेष अनुमति याचिका का निपटान दिनांक 16.03.2020 के आदेश द्वारा किया गया। उक्त आदेश द्वारा, इस न्यायालय ने विशेष अनुमति याचिका को खारिज कर दिया। अपने आदेश में, इस न्यायालय ने देखा कि चूंकि अपीलार्थी को लगभग डेढ़ साल तक संरक्षण प्राप्त था, इसलिए आत्मसमर्पण करने के लिए तीन सप्ताह का समय दिया गया था। इसके बाद, यह है कि इस न्यायालय ने आत्मसमर्पण के लिए एक सप्ताह की अवधि बढ़ा दी और तदनुसार, एन. आई. ए., दिल्ली के समक्ष अपीलार्थी ने आत्मसमर्पण कर दिया। आई. डी. 1 को नई दिल्ली की सत्र अदालत ने सात दिन की पुलिस हिरासत दी थी। उस पर 21.04.2020 , सात दिन की और रिमांड का आदेश दिया गया। अपीलार्थी की पॉलिसी हिरासत की समाप्ति से पहले, उसे 25.04.2020 पर न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया था। अपीलार्थी को 26.05.2020 पर मुंबई स्थानांतरित कर दिया गया और उसे न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया। इसके बाद,

कि अपीलार्थी 11.06.2020 पर डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए आगे बढ़ा। डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए आवेदन दायर करने के उद्देश्य से हिरासत की अवधि की गणना करने में, अपीलार्थी ने 28.08.2018 से 01.10.2018 तक 34 दिनों की नजरबंदी की अवधि शामिल की। इसके अलावा, एन. आई. ए. के साथ आई. डी. 2 से आई. डी. 1 तक ग्यारह दिनों की हिरासत और दिल्ली की तिहाड़ जेल और मुंबई की तलोजा जेल में आई. डी. 1 से आई. डी. 3 (न्यायिक हिरासत) तक अड़तालीस दिनों की हिरासत भी जोड़ी गई। ऐसा प्रतीत होता है कि एन. आई. ए. ने आई. डी. 1 पर 110 दिनों की हिरासत के बाद आरोप पत्र दायर करने के लिए समय बढ़ाने के लिए आवेदन दायर किया। एन. आई. ए. की विशेष अदालत, जिसके समक्ष डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए आवेदन दायर किया गया था, ने 12.07.2020 पर आवेदन को खारिज कर दिया। अपीलार्थी ने बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष दिनांकित 12.07.2020 आदेश को चुनौती देते हुए एक अपील को प्राथमिकता दी। आई. डी. 1 पर एन. आई. ए. ने अन्य बातों के साथ-साथ अपीलार्थी के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया। दिनांक 08.02.2021 के विवादित आदेश द्वारा, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 21 के तहत दायर अपील को खारिज कर दिया।

8. हमने श्री कपिल सिब्बल, विद्वान वरिष्ठ वकील और श्रीमती को भी सुना। श्री शादन की सहायता से वरिष्ठ वकील नित्या रामकृष्णन अपीलार्थी की ओर से फरासत और प्रत्यर्थी की ओर से अपर सॉलिसिटर जनरल श्री एस. वी. राजू।

विवादित आदेश में अंत

9. नजरबंदी की अवधि के दौरान, अपीलार्थी को अपने वकीलों और घर के आम निवासियों को छोड़कर किसी से भी मिलना नहीं था। वह परिसर से बाहर नहीं निकल सकते थे। घर के बाहर दिल्ली पुलिस के विशेष प्रकोष्ठ के दो गार्ड होने थे।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

जाँच एजेंसी/जाँच अधिकारी के पास उससे पूछताछ करने के लिए कोई पहुँच या अवसर नहीं था। पारगमन रिमांड आदेश पर रोक लगाए जाने के कारण, यह नहीं कहा जा सका कि अपीलार्थी जाँच के लिए पुलिस की हिरासत में था। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167 (2) के तहत (इसके बाद संक्षेप में 'सीआरपीसी' के रूप में संदर्भित), मजिस्ट्रेट को हिरासत को अधिकृत करना होता है। उच्च न्यायालय ने पारगमन रिमांड पर रोक लगा दी और अंत में पारगमन रिमांड को दरकिनार कर दिया, जिससे हिरासत को अवैध माना गया, मजिस्ट्रेट के आदेश द्वारा कोई अधिकृत हिरासत नहीं थी। इसलिए, अपीलार्थी डिफ़ॉल्ट जमानत के लाभ का दावा नहीं कर सकता है। पूर्वनिर्धारित जमानत के लाभ का दावा करने के लिए यह एक अनिवार्य आवश्यकता है कि अभियुक्त को हिरासत में रखा जाए

मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकृत। मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकरण को अवैध घोषित किए जाने के कारण, हिरासत अपने आप में अवैध थी। उक्त अवधि (नजरबंदी) को अधिकृत हिरासत के रूप में नहीं माना जा सकता है।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2)। न्यायालय ने इस न्यायालय के निर्णय से समर्थन प्राप्त किया जो चगंती सत्यनारायण और अन्य में बताया गया है। वी. आंध्र प्रदेश राज्य 2, यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि 90 दिनों की अवधि केवल रिमांड की तारीख से शुरू होगी और इस तथ्य के बावजूद कि आरोपी को पहले हिरासत में लिया गया होगा, किसी भी पूर्व तिथि से नहीं। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उसके लिए यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं था कि प्रत्येक निरोध, जिसके परिणामस्वरूप अभियुक्त की स्वतंत्रता से वंचित किया जा सकता है, Cr.P.C की धारा 167 (2) के तहत एक अधिकृत निरोध हो। मजिस्ट्रेट के किसी भी वैध प्राधिकरण के बिना, अपीलार्थी को हिरासत में लेते हुए, वह नहीं था

पूर्वनिर्धारित जमानत के हकदार। इस प्रकार, न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि वह अवधि, जब अपीलार्थी नजरबंद था, अर्थात 28.08.2018

01.10.2018 , बाहर करना पड़ा। दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारगमन रिमांड आदेश को रद्द करने के बाद, यह नोट किया गया कि अपीलार्थी ने आवेदन किया था

अग्रिम जमानत के लिए, जिसे सभी चरणों में खारिज कर दिया गया था और अंततः, अपीलार्थी ने केवल 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण कर दिया। यह उक्त पर आधारित था समर्पण करें कि मजिस्ट्रेट ने पुलिस हिरासत को अधिकृत किया है।

अपील की प्रस्तुतियाँ

10. अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय के तर्क में कोई सार नहीं है कि 34 दिनों की अवधि, जिसके दौरान अपीलार्थी नजरबंद था, को 90 दिनों की अवधि के भीतर शामिल

नहीं किया जा सकता है, क्योंकि जाँच अधिकारी के पास अपीलार्थी तक पहुँच नहीं थी, और यह असमर्थनीय है। यह तर्क दिया गया था कि अधिकारियों को कुछ भी नहीं रोक रहा था

2 (1986) 3 एस. सी. सी. 141 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

मजिस्ट्रेट द्वारा ऐसी अभिरक्षा, जो वह उचित समझे। यह प्रावधान एक शर्त के रूप में पूछताछ के लिए पुलिस तक पहुंच पर विचार नहीं करता है। यह इंगित किया जाता है कि यह मजिस्ट्रेट के लिए खुला है और अक्सर ऐसा किया जाता है कि रिमांड के पहले दिन से ही जो दिया जाता है वह न्यायिक हिरासत है, जिसमें पुलिस की आरोपी तक कोई पहुंच नहीं होती है। हालांकि, इस तरह की न्यायिक हिरासत को अवधि की गणना करने के लिए माना जाता है। पूर्वनिर्धारित जमानत के लिए आवेदन। इसके अलावा, यह बताया गया है कि यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी (2) (बी) के तहत किसी भी समय पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है। यह भी तर्क दिया जाता है कि जाँच पर कोई रोक नहीं थी। इन दोनों

संज्ञेय अपराध की जाँच करना और (बी) उसे एक के सामने पेश किया जाता है उसकी गिरफ्तारी के बाद मजिस्ट्रेट। यह तर्क दिया जाता है कि अपीलार्थी के मामले में, दोनों शर्तों को इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए पूरा किया गया था कि

अपीलार्थी को 28.08.2018 पर गिरफ्तार किया गया और उसे रिमांड के लिए मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। इसके बाद यह तर्क दिया गया कि यह तथ्य कि दिल्ली उच्च न्यायालय ने अंततः उक्त रिमांड को रद्द कर दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि हिरासत अवैध थी, यह अभिनिर्धारित करने के लिए एक असमर्थनीय आधार था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के तहत कोई रिमांड नहीं थी। अपीलार्थी ने दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश को स्वीकार किया, जिसमें उसने निष्कर्ष निकाला था कि अपीलार्थी की नजरबंदी 'अब तक समाप्त हो गई है'। यह तर्क दिया जाता है कि न्यायालय ने नजरबंदी की अवधि को अवैध या अमान्य नहीं माना है। यह बताया गया है कि अभिरक्षा को मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 167 के तहत अधिकृत किया गया था। इसे उच्च न्यायालय द्वारा और उसके बाद इस न्यायालय द्वारा एक संशोधन द्वारा बढ़ाया गया था। यह बताया गया है कि दिल्ली उच्च न्यायालय ने केवल पारगमन पर रोक लगा दी है न कि रिमांड आदेश पर। न्यायालय ने केवल रिमांड की प्रकृति को संशोधित किया, अर्थात, पुलिस हिरासत में पारगमन से अपीलार्थी के घर की सीमा के भीतर। नज़रबंदी, अवैध पाए जाने पर, नज़रबंदी की अवधि को समाप्त नहीं कर सकती है। दिल्ली उच्च न्यायालय का आदेश, जिसमें नजरबंदी का प्रावधान है, केवल सीआरपीसी की धारा 167 से प्राप्त किया जा सकता है। सी. आर. पी. सी. की धारा 167 के तहत हिरासत की कुल अवधि की आवश्यकता होती है जिसमें टूटी हुई अवधि शामिल हो सकती है और हिरासत एक निरंतर लॉट होने की आवश्यकता नहीं है। यह तर्क दिया जाता है कि धारा 167 पारगमन या अन्य रिमांड के बीच अंतर नहीं करती है। रिमांड, चाहे वह ट्रांजिट रिमांड हो, उसे आई. डी. 1 की धारा 167 से जोड़ा जाना चाहिए और ट्रांजिट रिमांड के लिए कोई अन्य प्रावधान नहीं है। उच्च न्यायालय ने स्वयं [2021] 5 एस. सी. आर. पाया है।

वह अपीलार्थी हिरासत में था जब वह नजरबंद था। इसके बाद यह बताया जाता है कि उच्च न्यायालय के पास किसी व्यक्ति को हिरासत में रखने की कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं थी। इस मामले में शक्ति केवल वही हो सकती है जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 से प्रवाहित होती है। यह पारगमन का आदेश है रिमांड जो हिरासत का कारण बना। यह तर्क दिया गया था कि उच्च न्यायालय या कोई भी उच्च न्यायालय मजिस्ट्रेट रिमांड की प्रकृति को संशोधित या बदल सकता है। दिल्ली उच्च न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा रिमांड की संशोधित प्रकृति को कभी भी दरकिनार नहीं किया गया था।

उत्तरदाता की प्रस्तुतियाँ

11. श्री एस. वी. राजू, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल उच्च न्यायालय के आदेश का समर्थन करेंगे:

ए। वे बताते हैं कि उस समय जब दिल्ली उच्च न्यायालय में बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका दायर की गई थी,

सी. एम. एम., साकेत द्वारा पारगमन रिमांड का आदेश पारित नहीं किया गया था।

बी। अग्रिम जमानत की मांग करने वाले अपने आवेदन में, अपीलार्थी ने अपनी दलीलों के माध्यम से संरक्षण की आवश्यकता को पेश करने की मांग की थी। सुरक्षा प्रदान की गई थी जिसे विभिन्न क्षेत्रों में जारी रखा गया था

कार्यवाही जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है। सी। रिलायंस को अग्रिम जमानत देने के खिलाफ यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) (4) के तहत बार में रखा गया है।

डी। उन्होंने अग्रिम जमानत के लिए अपीलार्थी की याचिका को खारिज करने वाले आदेश के पैराग्राफ 12 का उल्लेख किया। यह इंगित किया गया है कि यह अपीलार्थी का मामला था कि इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ नजरबंदी की अनुमति देकर उसकी स्वतंत्रता की रक्षा की थी। मामले का सार यह है कि अपीलार्थी ने स्वयं यह समझा था कि नजरबंदी हिरासत से सुरक्षा थी और इसलिए इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के अर्थ के भीतर हिरासत के रूप में नहीं समझा जा सकता था। संक्षेप में, नजरबंदी की अनुमति दी गई थी

इस न्यायालय को उपलब्ध असाधारण शक्तियों का प्रयोग।

12. यह आगे बताया गया है कि अपीलार्थी के अनुसार घर में नजरबंदी स्वयं संहिता के लिए अज्ञात थी। यह प्रतिवादी का मामला है कि एक आरोपी जिसे आई. डी. 1 की धारा 167 के तहत हिरासत में भेज दिया गया है, वह तब तक हिरासत से बाहर नहीं आ सकता जब तक कि उसे जमानत नहीं मिल जाती या जब तक कि वह बरी नहीं हो जाता। अपीलार्थी के पक्ष में कोई जमानत नहीं है। उन्हें न्यायिक हिरासत में

भी नहीं भेजा गया था। दूसरे शब्दों में, नजरबंदी के दौरान तथाकथित हिरासत गौतम नवलखा बनाम के भीतर हिरासत या हिरासत नहीं थी।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

आई. डी. 1 की धारा 167 का अर्थ है। यह पुलिस हिरासत भी नहीं थी क्योंकि इस अवधि के दौरान जांच एजेंसी की आरोपी तक कोई पहुंच नहीं थी। इस प्रकार, 34 दिनों की नजरबंदी की अवधि न तो न्यायिक हिरासत थी और न ही पुलिस हिरासत, जैसा कि Cr.P.C की धारा 167 में प्रावधान किया गया है।

उच्च न्यायालय के आदेश पर यह इंगित करने के लिए भरोसा किया जाता है कि न्यायालय ने विचार किया कि निर्णय के साथ नजरबंदी समाप्त हो गई। यह तथ्य कि जब उच्च न्यायालय ने 1.10.2018 पर निर्णय सुनाया तो उसने जमानत नहीं दी, यह दर्शाता है कि यह Cr.P.C की धारा 167 के तहत पारित आदेश नहीं था।

उच्च न्यायालय को दोहराया जाता है, अर्थात्, 01.10.2018 पर अपने फैसले के साथ, न्यायालय ने घड़ी को पीछे कर दिया है और अपीलार्थी की गिरफ्तारी पर विचार किया है। गैर-एस्ट के रूप में। यही कारण है कि अपीलार्थी को जमानत नहीं दी गई थी। उन्हें न्यायिक हिरासत में नहीं रखा गया था। नजरबंदी समाप्त होने के साथ, अपीलार्थी एक स्वतंत्र व्यक्ति बन गया, जो अग्रिम जमानत के लिए आवेदन करने का हकदार था, जिसका उसने लाभ उठाया। अग्रिम जमानत के लिए आवेदन में यह अनुमान लगाया गया है कि 28.08.2018 पर गिरफ्तारी गैर-अनुमानित थी क्योंकि किसी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए दो बार गिरफ्तार नहीं किया जा सकता था। अग्रिम जमानत से इनकार करके,

इस न्यायालय सहित न्यायालयों ने अपीलार्थी को उन्हीं अपराधों के लिए गिरफ्तारी की अनुमति दी, जिनके लिए उसे पहले गिरफ्तार किया गया था। यह इंगित करता है कि पहले की कार्यवाही को सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए गैर-निहित माना जाता था। अपीलार्थी द्वारा समर्पण ने अपीलार्थी को आई. डी. 1 की धारा 167 के अर्थ के भीतर नजरबंदी को हिरासत के रूप में पेश करने से रोक दिया। सी. एम. एम., साकेत द्वारा पारित आदेश केवल पेश करने का आदेश था न कि हिरासत में रखने का आदेश। आई. डी. 1 की धारा 56 और 57 के साथ धारा 167 को पढ़ते हुए, यह बताया गया है कि पारगमन रिमांड के आदेश को सक्षम मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोपी को पेश करने में सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से 24 घंटे की गिरफ्तारी की अवधि बढ़ाने के आदेश के रूप में समझा जाना चाहिए, जो इस मामले में पुणे में स्थित सक्षम न्यायालय था। धारा 56,57 और 167 में यह तर्क दिया गया है कि चूंकि 24 घंटे के भीतर एक गिरफ्तार व्यक्ति को पेश करने का कर्तव्य है, इसलिए धारा 57 में आरोपी को सक्षम अदालत के समक्ष पेश करने के लिए 24 घंटे से अधिक की हिरासत के लिए धारा 167 के तहत एक विशेष आदेश का प्रावधान किया गया है। इस धारा 167 के तहत आदेश आमतौर पर या तो पुलिस रिमांड के आदेश होते हैं या किसी आरोपी को न्यायिक हिरासत में भेजने के आदेश होते हैं। धारा 57 में निर्दिष्ट विशेष आदेश है -

अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के पास भेजने का आदेश, जिसके पास या तो मामले की सुनवाई करने या अभियुक्त को सौंपने का अधिकार क्षेत्र हो। ऐसे मामले में जहां किसी अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाता है, जिसके पास ऐसा अधिकार क्षेत्र नहीं होता है, मजिस्ट्रेट के पास किसी अभियुक्त को न्यायिक हिरासत में भेजने का कोई अधिकार या शक्ति नहीं होती है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

इसलिए, पारगमन रिमांड का आदेश 90 दिनों की गणना में अवधि को शामिल करने के उद्देश्य से एक आदेश नहीं है और यह केवल एक प्रस्तुति है। आदेश दें। किसी भी तरह से, यह बताया जाता है कि साकेत अदालत (पारगमन आदेश) का आदेश, भले ही इसे Cr.PC की धारा 167 के तहत एक आदेश माना जाता है, यह दिल्ली उच्च न्यायालय तक शायद ही कुछ घंटों के लिए लागू था

उसी दिन शाम 4 बजे के आसपास वही रहे। भले ही 1 दिन की इस अवधि को 90 दिनों की अवधि की गणना के उद्देश्य से शामिल किया गया हो, अपीलार्थी डिफ़ॉल्ट जमानत का हकदार नहीं होगा। यह प्रतिवादी का मामला है कि अपीलार्थी द्वारा अपनाई गई व्याख्या धारा 167 के तहत पुलिस हिरासत को भ्रामक बना देगी।

13. यू. ए. पी. ए. अपराधों के मामले में जांच अधिकारी पहले 15 दिनों या 30 दिनों के दौरान हिरासत में पूछताछ के अवसर से वंचित रहेंगे। उस व्याख्या से बचना चाहिए जो क़ानून के तहत एक निष्पक्ष जांच को विफल कर देती है।

14. न्यायालय के अधिनियम से जाँच पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।

एजेंसी-उक्ति "एक्टस क्यूरी नेमिनेम ग्रेवबिट" में लागू होगा वर्तमान मामला।

15. बंदी प्रत्यक्षीकरण की मांग करने वाली रिट याचिका में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश Cr.P.C की धारा 167 के तहत एक आदेश नहीं था।

यदि अपीलार्थी का निवेदन स्वीकार कर लिया जाता है, तो इसका मतलब होगा कि अपीलार्थी को 30 दिनों के बाद पुलिस हिरासत में भेज दिया गया था, अर्थात 15.04.2020 और 21.04.2020 पर। अपीलार्थी ने इस पर कभी आपत्ति नहीं की। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलार्थी का वर्तमान तर्क केवल विचार के बाद है। गिरफ्तारी की अवधि को बाहर रखा जाना चाहिए और अवधि की गणना पेश किए जाने की तारीख से की जानी चाहिए। प्रस्तुतिकरण चगंती सत्यनारायण (ऊपर) में इस न्यायालय के निर्णय पर आधारित है। यह 15.04.2020 को उत्पादन की तारीख मानने के बाद होता है।

विश्लेषण

16. यद्यपि अंतिम प्रश्न जिसका उत्तर दिया जाना है वह यह है कि क्या अपीलार्थी द्वारा नजरबंदी में बिताए गए 34 दिनों की अवधि को धारा 167 Cr.P.C के तहत 90 दिनों की अवधि के लिए गिना जाना है, कई मुद्दे उत्पन्न होते हैं जिन्हें हम निम्नानुसार स्पष्ट करते हैं:

1) पारगमन रिमांड के आदेश की प्रकृति क्या है? क्या यह आदेश है?

Cr.PC की धारा 167 के तहत पारित।

2) दिल्ली उच्च न्यायालय में अपीलार्थी द्वारा रिट याचिका में पारित दिनांक 28.08.2018 के अंतरिम आदेश की प्रकृति क्या है, जैसा कि गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

विस्तारित? क्या ये आदेश Cr.P.C की धारा 167 के तहत पारित किए जाते हैं? 3) दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांकित 1.10.2018 के फैसले का क्या प्रभाव है जिसमें अपीलार्थी की गिरफ्तारी और पारगमन

रिमांड को अवैध पाया जाता है?

4) क्या अपीलार्थी की नजरबंदी पुलिस हिरासत या न्यायिक हिरासत के बराबर है? क्या धारा 167 Cr.P.C के तहत पुलिस हिरासत और न्यायिक हिरासत के अलावा हिरासत का आदेश हो सकता है? है।

धारा 167 के अंतर्गत नजरबंदी हिरासत

Cr.P.C? 5) क्या अपीलार्थी की नजरबंदी Cr.P.C की धारा 167 के तहत हिरासत में नहीं है।

सक्षम जाँच अधिकारी द्वारा पूछताछ की गई?

6) अपीलार्थी के 15.4.2020 से 25.4.2020 तक पुलिस हिरासत में होने का क्या प्रभाव पड़ता है और अभियुक्त की कथित सहमति

आदेश में अपीलार्थी और अपीलार्थी की अभिरक्षा?

7) क्या अभिरक्षा की टूटी हुई अवधि अन्यथा धारा 167 Cr.P.C के लिए पता लगाने योग्य है. अभिरक्षा की कुल अधिकतम अवधि को एक साथ रखने के लिए पर्याप्त है जिसके बाद चूक जमानत का अधिकार है।

उत्पन्न होता है या क्या कानून देने वाले ने केवल हिरासत की परिकल्पना की है जो

निरंतर है?

8) संविधान के अनुच्छेद 21 और अनुच्छेद 22 के अधिदेश का क्या प्रभाव है?

संविधान?

17. इससे पहले कि हम विभिन्न मुद्दों से निपटें, यह ध्यान रखना आवश्यक है

संविधान की मुख्य विशेषताओं में, Cr.P.C. और गैरकानूनी भी

आई. टी. आई. (रोकथाम) अधिनियम (यू. ए. पी. ए.)।

18. संविधान के अनुच्छेद 21 में अमूल्य शामिल हैं।

मानसिक अधिकार जहाँ तक यह घोषणा की गई है कि किसी भी व्यक्ति को वंचित नहीं किया जाएगा

स्थापित प्रक्रिया के अनुसार को छोड़कर जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता। अनुच्छेद 22 (1) और (2) इस प्रकार है:

" 2. कुछ मामलों में गिरफ्तारी और निरोध के खिलाफ संरक्षण (1) गिरफ्तार किए गए किसी भी व्यक्ति को इस तरह की गिरफ्तारी के आधार के बारे में जल्द से जल्द सूचित किए बिना हिरासत में नहीं रखा जाएगा और न ही उसे अपनी पसंद के वकील द्वारा परामर्श करने और बचाव करने के अधिकार से वंचित किया जाएगा।

21] 5 एस सी आर।

(2) प्रत्येक व्यक्ति जिसे गिरफ्तार किया जाता है और हिरासत में रखा जाता है, उसे इस तरह की गिरफ्तारी के चौबीस घंटे की अवधि के भीतर निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाएगा।

गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट की अदालत तक की यात्रा और ऐसे किसी भी व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के अधिकार के बिना उक्त अवधि से आगे हिरासत में नहीं रखा जाएगा।

19. Cr.P.C का अध्याय V "व्यक्तियों की गिरफ्तारी" से संबंधित है। धारा 41 उन स्थितियों से संबंधित है जिनमें कोई भी पुलिस अधिकारी गिरफ्तार कर सकता है।

मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना या वारंट के बिना कोई व्यक्ति। धारा 41 (1) (ए) से 41 (1) (डी) मनमाने ढंग से गिरफ्तारी से बचने के लिए सुरक्षा उपायों का प्रावधान करती है और गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को कुछ अधिकार भी प्रदान करती है। वे थे।

2009 के अधिनियम 5 द्वारा 1.11.2010 से प्रभावी रूप से जोड़ा गया। धारा 43 किसी निजी व्यक्ति द्वारा भी गिरफ्तार करने की शक्ति और ऐसे मामले में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का प्रावधान करती है। धारा 48 Cr.P.C. इस प्रकार है:

" 48. अन्य क्षेत्राधिकारों में अपराधियों का पीछा करना। एक पुलिस अधिकारी, बिना वारंट के किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने के उद्देश्य से, जिसे वह गिरफ्तार करने के लिए अधिकृत है, ऐसे व्यक्ति का किसी भी स्थान पर पीछा कर सकता है।

भारत "। 20. धारा 56 और 57 Cr.P.C. भी प्रासंगिक हैं और हम इनका उल्लेख करते हैं

एक ही।

" 56. गिरफ्तार व्यक्ति को मजिस्ट्रेट अधिकारी के सामने ले जाया जाएगा पुलिस स्टेशन का प्रभार। - वारंट के बिना गिरफ्तारी करने वाला एक पुलिस अधिकारी, बिना अनावश्यक देरी के और

गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को मामले में अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के समक्ष जमानत देने, लेने या भेजने के संबंध में इसमें निहित प्रावधान, या एक पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के सामने।

57. गिरफ्तार व्यक्ति को चौबीस से अधिक हिरासत में नहीं रखा जाएगा

यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर चौबीस घंटे गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक।

21. अध्याय VI प्रकट होने के लिए मजबूर करने की प्रक्रियाओं से संबंधित है। अध्याय VI का भाग ए सम्मनों से संबंधित है। भाग बी गिरफ्तारी के वारंट से संबंधित है। विचाराधीन गिरफ्तारी वारंट वे हैं जो Cr.P.C के तहत अदालत द्वारा जारी किए जाते हैं। धारा 76 Cr.P.C इस प्रकार है:

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

" 76. गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को बिना किसी देरी के अदालत के समक्ष लाया जाए। गिरफ्तारी वारंट निष्पादित करने वाला पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति (सुरक्षा के रूप में धारा 71 के प्रावधानों के अधीन) बिना अनावश्यक देरी के गिरफ्तार व्यक्ति को अदालत के समक्ष लाएगा। जिसके समक्ष उसे कानून द्वारा ऐसे व्यक्ति को पेश करने की आवश्यकता है:

बशर्ते कि ऐसी देरी, किसी भी मामले में, से यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर चौबीस घंटे से अधिक नहीं होगी

मजिस्ट्रेट के न्यायालय में गिरफ्तारी का स्थान।

22. धारा 77 Cr.P.C के तहत, गिरफ्तारी के वारंट को भारत में किसी भी स्थान पर निष्पादित किया जा सकता है। अध्याय बारहमामे पुलिसकेँ सूचना देल गेल अछि।

और जाँच करने की उनकी शक्तियाँ। प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के लिए पुलिस अधिकारी के अनिवार्य कर्तव्य पर इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने ललिता कुमारी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार और अन्य 3 मामले में दिए गए निर्णय में विस्तार से विचार किया है।

23. धारा 156 Cr.P.C. इस प्रकार है:

" 156. संज्ञेय मामले की जाँच करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति। (1) पुलिस स्टेशन का प्रभारी कोई भी अधिकारी, मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना, किसी भी संज्ञेय मामले की जांच कर सकता है जो एक अदालत

ऐसी सीमाओं के भीतर स्थानीय क्षेत्र पर अधिकारिता रखने वाले

स्टेशन के पास प्रावधानों के तहत जांच करने या प्रयास करने की शक्ति होगी

अध्याय XIII का। (2) ऐसे किसी भी मामले में किसी पुलिस अधिकारी की किसी भी कार्यवाही पर किसी भी स्तर पर इस आधार पर सवाल नहीं उठाया जाएगा कि मामला ऐसा था जिसे इस धारा के तहत अधिकार नहीं दिया गया था।

जाँच करें।

(3) धारा 190 के तहत सशक्त कोई भी मजिस्ट्रेट इस तरह का आदेश दे सकता है

ऊपर उल्लिखित एक जांच। "

24. धारा 156 Cr.P.C के तहत, पुलिस स्टेशन का प्रभारी कोई भी पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी भी संज्ञेय मामले की जांच कर सकता है, जिसे ऐसे स्टेशन की सीमा के भीतर स्थानीय क्षेत्र पर अधिकार क्षेत्र रखने वाली अदालत को चलाने की शक्ति है। धारा 157 जाँच के लिए प्रक्रिया

से संबंधित है। उक्त प्रावधान अन्य बातों के साथ-साथ तथ्यों की जांच करने के लिए मौके पर आगे बढ़ने की शक्ति पर विचार करता है और

मामले की परिस्थिति, और यदि आवश्यक हो, तो इसके लिए उपाय करें

बहुत और अपराधी की गिरफ्तारी। धारा Cr.P.C पर ध्यान देना भी उचित है। यह निम्नानुसार है:

" 167. प्रक्रिया जब जाँच पूरी नहीं की जा सकती है

चौबीस घंटे। (1) जब भी किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाता है और हिरासत में रखा जाता है, और ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 57 द्वारा निर्धारित चौबीस घंटे की अवधि के भीतर जांच पूरी नहीं की जा सकती है, और यह विश्वास करने के लिए आधार हैं कि आरोप या जानकारी अच्छी तरह से स्थापित है, तो पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी या जांच करने वाला पुलिस अधिकारी, यदि वह उप-निरीक्षक के पद से नीचे नहीं है, तो तुरंत निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट को डायरी में प्रविष्टियों की एक प्रति प्रेषित करेगा।

इसके बाद मामले के संबंध में विहित किया जाएगा, और उसी समय

अभियुक्त को ऐसे मजिस्ट्रेट के पास समय भेजें। (2) मजिस्ट्रेट, जिसे इस धारा के तहत एक आरोपी व्यक्ति भेजा जाता है, समय-समय पर मामले की सुनवाई करने के लिए अधिकार क्षेत्र रखता है या नहीं, उसे हिरासत में लेने के लिए अधिकृत कर सकता है।

ऐसी अभिरक्षा में अभियुक्त जिसे ऐसा मजिस्ट्रेट उचित समझता है, कुल मिलाकर पंद्रह दिनों से अधिक की अवधि के लिए; और यदि उसके पास मामले की सुनवाई करने या मुकदमे के लिए इसे करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, और वह आगे हिरासत को अनावश्यक समझता है, तो वह अभियुक्त को न्यायिक हिरासत में भेजने का आदेश दे सकता है।

ऐसी अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट:

बशर्ते कि - [(क) मजिस्ट्रेट अभियुक्त को हिरासत में लेने के लिए अधिकृत कर सकता है।

व्यक्ति, पुलिस की अभिरक्षा में पंद्रह दिनों की अवधि से परे, यदि वह संतुष्ट है कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं, लेकिन कोई भी मजिस्ट्रेट इस अनुच्छेद के तहत अभिरक्षा में आरोपी व्यक्ति को कुल मिलाकर हिरासत में रखने के लिए अधिकृत नहीं करेगा।

अवधि से अधिक, (i) नब्बे दिन, जहां जांच मौत, आजीवन कारावास या कारावास से दंडनीय अपराध से संबंधित है।

दस साल से कम की अवधि नहीं;

((ii) साठ दिन, जहां जाँच किसी अन्य अपराध से संबंधित है, और नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर, जैसा भी मामला हो, अभियुक्त व्यक्ति को जमानत पर रिहा कर दिया जाएगा

यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और जमानत देता है, और इस उप-धारा के तहत जमानत पर रिहा किए गए प्रत्येक व्यक्ति को गौतम नवलखा v.

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

उस अध्याय के प्रयोजनों के लिए अध्याय XXXIII के प्रावधानों के तहत;]

[(ख) कोई भी मजिस्ट्रेट अभियुक्त को हिरासत में रखने के लिए अधिकृत नहीं करेगा।

इस धारा के तहत पुलिस की अभिरक्षा जब तक कि आरोपी को पहली बार व्यक्तिगत रूप से उसके सामने पेश नहीं किया जाता है और बाद में हर बार जब तक कि आरोपी पुलिस की अभिरक्षा में नहीं रहता है, लेकिन मजिस्ट्रेट आरोपी को व्यक्तिगत रूप से या इलेक्ट्रॉनिक वीडियो लिंकेज के माध्यम से पेश करने पर न्यायिक अभिरक्षा में आगे की हिरासत बढ़ा सकता है।

(ग) द्वितीय श्रेणी का कोई भी मजिस्ट्रेट, जो उच्च न्यायालय द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त नहीं है, पुलिस की अभिरक्षा में निरोध को अधिकृत नहीं करेगा। [स्पष्टीकरण I. शंकाओं से बचने के लिए, एतद्द्वारा यह घोषित किया जाता है कि, पैराग्राफ (ए) में निर्दिष्ट अवधि की समाप्ति के बावजूद, अभियुक्त को तब तक हिरासत में रखा जाएगा जब तक कि वह जमानत नहीं देता है।]

[स्पष्टीकरण II। यदि कोई प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या किसी अभियुक्त व्यक्ति को खंड (ख) के तहत आवश्यकतानुसार मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था, तो अभियुक्त व्यक्ति को हिरासत में लेने को अधिकृत करने वाले आदेश पर उसके हस्ताक्षर से या मजिस्ट्रेट द्वारा प्रमाणित आदेश से इलेक्ट्रॉनिक वीडियो लिंकेज के माध्यम से आरोपी व्यक्ति को पेश करने के बारे में साबित किया जा सकता है, जैसा भी मामला हो:] [बशर्ते कि अठारह वर्ष से कम आयु की महिला के मामले में निरोध को रिमांड होम या मान्यता प्राप्त सामाजिक संस्थान की अभिरक्षा में रखने के लिए अधिकृत किया जाएगा।]

[(2 - क) उप-धारा (1) या उप-धारा (2) में किसी बात के होते हुए भी, पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी या जांच करने वाला पुलिस अधिकारी, यदि वह उप-निरीक्षक के पद से नीचे नहीं है, तो जहां न्यायिक मजिस्ट्रेट उपलब्ध नहीं है, वहां निकटतम कार्यकारी मजिस्ट्रेट को भेज सकता है, जिसे न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट की शक्तियां प्रदान की गई हैं, इसके बाद डायरी में दर्ज प्रविष्टि की एक प्रति। मामले के संबंध में विहित, और उसी समय, आगे बढ़ेगा

अभियुक्त, ऐसे कार्यकारी मजिस्ट्रेट को, और उसके बाद, ऐसे कार्यकारी मजिस्ट्रेट, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, [2021] 5 एस. सी. आर.

अभियुक्त व्यक्ति को ऐसी अभिरक्षा में हिरासत में रखने के लिए प्राधिकृत करें जैसे कि वह कुल मिलाकर सात दिनों से अधिक की अवधि के लिए उपयुक्त सोच सकता है; और, निरोध की अवधि समाप्त होने पर

बशर्ते कि उपरोक्त अवधि की समाप्ति से पहले, कार्यकारी मजिस्ट्रेट मामले के अभिलेखों को उस मामले से संबंधित डायरी में प्रविष्टियों की एक प्रति के साथ निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट को प्रेषित करेगा जो पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी या जांच करने वाले पुलिस अधिकारी द्वारा उसे प्रेषित की गई थी।] (3) इस धारा के तहत निरोध को प्राधिकृत करने वाला मजिस्ट्रेट

पुलिस की अभिरक्षा उसके ऐसा करने के कारणों को दर्ज करेगी।

(4) ऐसा आदेश देने वाले मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के अलावा कोई भी मजिस्ट्रेट अपने आदेश की एक प्रति, इसे बनाने के अपने कारणों के साथ, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजेगा।

(5) यदि मजिस्ट्रेट द्वारा समन-मामले के रूप में सुनवाई योग्य किसी भी मामले में, आरोपी को गिरफ्तार किए जाने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर जांच समाप्त नहीं होती है, तो मजिस्ट्रेट अपराध की आगे की जांच को रोकने का आदेश तब तक देगा जब तक कि जांच करने वाला अधिकारी मजिस्ट्रेट को संतुष्ट नहीं करता है कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह महीने की अवधि से आगे जांच जारी रखना आवश्यक है।

(6) जहां किसी अपराध की आगे की जांच को रोकने का कोई आदेश उप-धारा (5) के तहत दिया गया है, सत्र न्यायाधीश, यदि - वह संतुष्ट है, उसे किए गए एक आवेदन पर या अन्यथा, कि अपराध की आगे की जांच की जानी चाहिए, उप-धारा (5) के तहत दिए गए आदेश को खाली कर देता है और जमानत और अन्य मामलों के संबंध में ऐसे निर्देशों के अधीन अपराध में आगे की जांच करने का निर्देश देता है जो वह निर्दिष्ट करे। गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

25. यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) (2) में संशोधित प्रावधान है -

धारा 167 का अनुलेखन।26. पंजाब राज्य में v. अजैब सिंह 1, अदालत को अनुच्छेद 22 (1) के टी और "गिरफ्तारी" अभिव्यक्ति के दायरे से भी निपटना था।

उसमें प्रवेश किया।

" 16. मोटे तौर पर, गिरफ्तारी को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

श्रेणियां, अर्थात्, अदालत द्वारा जारी वारंट के तहत गिरफ्तारी और ऐसे वारंट के अलावा अन्य गिरफ्तारी। गिरफ्तारी की पहली श्रेणी के बारे में, धारा 75 से 86 उप-शीर्षक "बी" के तहत एकत्र की गई है।

आपराधिक संहिता के अध्याय VI में गिरफ्तारी का वारंट

प्रक्रिया उस संहिता के तहत अदालत द्वारा जारी वारंट के निष्पादन में गिरफ्तारी से संबंधित है। धारा 75 में निर्धारित किया गया है कि इस तरह के वारंट पर पीठासीन अधिकारी या मजिस्ट्रेटों की पीठ के मामले में ऐसी पीठ के किसी भी सदस्य द्वारा लिखित रूप में हस्ताक्षर किए जाने चाहिए और उस पर अदालत की मुहर होनी चाहिए। फॉर्म नं. संहिता की अनुसूची V का II अभियुक्त व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए वारंट का एक रूप है। वारंट में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति पर एक निश्चित अपराध का आरोप लगाया गया है। फॉर्म नं. उस अनुसूची के VII का उपयोग एक गवाह को सामने लाने के लिए किया जाता है। वारंट स्वयं कहता है कि इसे जारी करने वाली अदालत के पास यह विश्वास करने का अच्छा और पर्याप्त कारण है कि गवाह तब तक गवाह के रूप में उपस्थित नहीं होगा जब तक कि ऐसा करने के लिए मजबूर नहीं किया जाता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि दोनों ही मामलों में वारंट गिरफ्तारी का कारण निर्धारित करता है, अर्थात्, गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति ने कुछ अपराध किया है या करने का संदेह है या करने की संभावना है। संक्षेप में, वारंट में गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति के खिलाफ एक स्पष्ट आरोप है। धारा 80 में यह अपेक्षा की गई है कि पुलिस अधिकारी या वारंट निष्पादित करने वाले अन्य व्यक्ति को गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति को उसके सार के बारे में सूचित करना चाहिए, और यदि आवश्यक हो, तो उसे वारंट दिखाएगा। इस प्रकार यह बहुत स्पष्ट है कि गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति को वास्तव में गिरफ्तार किए जाने से पहले उसकी गिरफ्तारी के आधार के बारे में सूचित किया जाता है। इसके बाद धारा 81 आती है जो इस प्रकार है:

" गिरफ्तारी वारंट निष्पादित करने वाला पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति (प्रतिभूति के संबंध में धारा 76 के प्रावधानों के अधीन) इसके बिना

अनावश्यक देरी से गिरफ्तार व्यक्ति को अदालत के सामने लाया जाए

जिसके समक्ष उसे कानून द्वारा ऐसे व्यक्ति को पेश करने की आवश्यकता है।

17. दंड प्रक्रिया संहिता के अलावा, अन्य कानून हैं जो वारंट के निष्पादन में गिरफ्तारी का प्रावधान करते हैं

एक अदालत द्वारा जारी गिरफ्तारी। एक उदाहरण लेने के लिए, सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 38 नियम 1 अदालत को कुछ मामलों में निर्णय से पहले प्रतिवादी की गिरफ्तारी के लिए वारंट जारी करने के लिए अधिकृत करता है। परिस्थितियाँ। परिशिष्ट एफ में प्रपत्र संख्या 1 ऐसे वारंट की शर्तों को निर्धारित करता है। यह स्पष्ट रूप से बताता है कि यह अदालत की संतुष्टि के लिए साबित हो गया है कि इस विश्वास का संभावित कारण है कि प्रतिवादी नियम 1 में उल्लिखित चीजों में से एक या दूसरे को करने वाला है। अदालत आदेश 21 नियम 38 के साथ पठित धारा 55 के तहत डिक्री के निष्पादन में निर्णय देनदार की गिरफ्तारी के लिए वारंट जारी कर सकती है। फॉर्म 13 इस तरह के वारंट की शर्तों को निर्धारित करता है। वारंट डिक्री और फैसले की विफलता का पाठ करता है-ऋणी डिक्री धारक को डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए और अदालत के बेलिफ को चूक करने वाले को गिरफ्तार करने का निर्देश देता है।

निर्णय-ऋणी, जब तक कि वह लागत के साथ अवमूल्यन राशि का भुगतान नहीं करता है और उसे सभी सुविधाजनक गति के साथ अदालत के समक्ष नहीं लाता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि, दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अदालत द्वारा जारी गिरफ्तारी वारंट के मामले में, सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत अदालत द्वारा जारी गिरफ्तारी वारंट।

काफी स्पष्ट रूप से गिरफ्तारी के कारण का खुलासा करता है जिसमें यह निर्धारित करता है डिफ़ॉल्ट, पकड़े गए या वास्तविक का आरोप, और वह व्यक्ति

गिरफ्तार किए जाने से पहले उसकी गिरफ्तारी के कारणों से परिचित कराया जाता है।

इसके अलावा पैरा 20 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्धारित किया है:

" 20. अब अनुच्छेद 22 (1) और (2) की ओर मुड़ते हुए, हमें यह पता लगाना होगा कि क्या इसका संरक्षण दोनों श्रेणियों की गिरफ्तारी तक फैला हुआ है।

ऊपर उल्लिखित, और, यदि नहीं, तो उनमें से कौन सा इसके संरक्षण में आता है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि अदालत द्वारा जारी वारंट के बिना गिरफ्तारी अधिक सुरक्षा की मांग करती है।

इस तरह के वारंट के तहत गिरफ्तारी। यह प्रावधान कि गिरफ्तार व्यक्ति को 24 घंटे के भीतर निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाना चाहिए, गिरफ्तारी के मामले में विशेष रूप से वांछनीय है, अन्यथा अदालत द्वारा जारी वारंट के तहत, क्योंकि यह तत्काल गिरफ्तारी सुनिश्चित करता है।

गिरफ्तारी करने वाले व्यक्ति के कानूनी अधिकार के लिए न्यायिक दिमाग का आवेदन और उसके द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया की नियमितता। अदालत द्वारा जारी वारंट के तहत गिरफ्तारी के मामले में, न्यायिक दिमाग पहले से ही मामले में लागू किया जा चुका था जब वारंट गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

सही है। यह भी पूरी तरह से स्पष्ट है कि अनुच्छेद 22 (2) की भाषा व्यावहारिक रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 60 और 61 से नकल की गई है जो प्रक्रिया को स्वीकार्य रूप से निर्धारित करती है। बिना वारंट के किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किए जाने के बाद पालन किया जाना। अनुच्छेद 22 (1) की अपेक्षा यह है कि गिरफ्तार किए गए किसी भी व्यक्ति को, जितनी जल्दी हो सके, ऐसी गिरफ्तारी के आधार के बारे में सूचित किए बिना हिरासत में नहीं रखा जाएगा, यह इंगित करता है कि खंड

वास्तव में अदालत के वारंट के बिना गिरफ्तारी पर विचार करता है, क्योंकि, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, अदालत के वारंट के तहत गिरफ्तार किया गया व्यक्ति बनाया जाता है।

गिरफ्तारी से पहले उसकी गिरफ्तारी के आधारों से परिचित है

वास्तव में प्रभावित। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उसकी पसंद के कानूनी व्यवसायी से परामर्श करने का अधिकार गिरफ्तार व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी के लिए आधारों की वैधता या पर्याप्तता के बारे में सलाह देने में सक्षम बनाना है। गिरफ्तार व्यक्ति का अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी द्वारा बचाव करने का अधिकार यह मानता है कि एक आरोप है

जिसके खिलाफ उसका बचाव करना पड़ता है। अनुच्छेद 22 (1) और (2) की भाषा इंगित करती है कि इसके द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकार ऐसी गिरफ्तारियों के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है जो इस आरोप या आरोप पर अदालत द्वारा जारी वारंट के तहत अन्यथा प्रभावी होती हैं कि गिरफ्तार व्यक्ति ने आपराधिक या अर्ध-आपराधिक प्रकृति का कोई कार्य किया है, या करने का संदेह है या करने की संभावना है या जनता या राज्य के हित के लिए प्रतिकूल कोई गतिविधि है। दूसरे शब्दों में, अनुच्छेद 22 (1) और (2) की भाषा में संकेत है कि इसे कार्यपालिका या अन्य गैर-न्यायिक प्राधिकरण के कार्य के खिलाफ सुरक्षा देने के लिए बनाया गया था। ब्लिट्ज़ मामला (1952 का याचिका संख्या 75), जिस पर श्री दादाचंजी भरोसा करते हैं, इसी दृष्टिकोण पर आगे बढ़ता है, क्योंकि वहाँ गिरफ्तारी अदालत द्वारा नहीं, बल्कि राज्य विधानमंडल के अध्यक्ष द्वारा जारी वारंट पर की गई थी और गिरफ्तारी गिरफ्तार व्यक्ति के विधानमंडल की अवमानना के दोषी होने के स्पष्ट आरोप पर की गई थी। हालाँकि, यह हमारा उद्देश्य नहीं है, न ही हम इसे वांछनीय मानते हैं, कि इस मौलिक अधिकार के दायरे और दायरे का सटीक और सावधानीपूर्वक वर्णन करने का प्रयास करें या इसके संरक्षण के भीतर आने वाले मामलों को पूरी तरह से गिनें। और जो कुछ भी आ सकता है अनुच्छेद 22 (1) और (2) के दायरे में, इस मामले के प्रयोजनों के लिए यह कहना पर्याप्त है कि हम संतुष्ट हैं कि भौतिक

[2021] 5 एस. सी. आर. की वसूली की प्रक्रिया में एक अपहृत व्यक्ति पर प्रतिबंध लगाया गया।

और उस व्यक्ति को बिना किसी आरोप के हिरासत में लेना या किसी वास्तविक या संदिग्ध या गिरफ्तार किए गए कार्य का आरोप

आपराधिक या अर्ध-आपराधिक प्रकृति के किसी भी अपराध के उस व्यक्ति द्वारा

या राज्य या लोक हित के लिए प्रतिकूल किसी कार्य का, और

उस व्यक्ति को प्रभारी अधिकारी की अभिरक्षा में सौंपना

विवादित अधिनियम की धारा 4 के तहत निकटतम शिविर नहीं हो सकता है

अनुच्छेद के अर्थ में गिरफ्तारी और निरोध के रूप में माना जाता है 22 (1) और (2)। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश

लेख का अर्थ लगाते हुए मामले को अधिक सरल बनाया, संभवतः

क्योंकि इससे पहले जिन बातों पर विचार किया गया था, वे नहीं थे स्पष्ट रूप से उनके ध्यान में लाया गया। "

[जोर दिया गया]

27. यह ध्यान दिया जाएगा कि Cr.P.C, 1973 में प्रावधान के साथ,

धारा 76, वारंट के तहत गिरफ्तारी के मामले में, व्यक्ति को होना है

यात्रा के लिए लिए गए समय को छोड़कर 24 घंटे के भीतर अदालत के समक्ष पेश किया गया। ऐसा परंतुक 1898 की धारा (81) में अनुपस्थित था, जिस पर न्यायालय द्वारा विचार किया गया था।

28. यू. पी. राज्य बनाम अब्दुल समद, उत्तरदाता जो थे

पति और पत्नी को उनके खिलाफ पारित निर्वासन के आदेश का पालन न करने के लिए गिरफ्तार किया गया था। उन्हें अमृतसर भेजा गया। पाकिस्तान को निर्वासित किया गया। उन्हें 23 जुलाई, 1960 को ए. एम. पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया, जिन्होंने उन्हें सिविल कोर्ट में रखने का आदेश दिया।

लाइन्स पुलिस स्टेशन। उन्हें 25 जुलाई 1960 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक संदेश के आधार पर लखनऊ वापस लाया गया, जिसमें उन्हें पेश करने की आवश्यकता थी और उन्हें उच्च न्यायालय के उप-पंजीयक के समक्ष पेश किया गया, जिन्होंने उन्हें अगले दिन सुबह पेश करने का निर्देश दिया। अदालत, जो प्रत्यर्थियों द्वारा बंदी प्रत्यक्षीकरण के रिट पर विचार कर रही थी, ने प्रत्यर्थियों को अगले

दिन पेश करने का निर्देश दिया। 28 जुलाई 1960 को उच्च न्यायालय ने दूसरी अवधि यानी 25 जुलाई 1960 से दोपहर 2 बजे तक पर ध्यान केंद्रित किया। 27 जुलाई, 1960 को पाया गया कि इस अवधि के दौरान प्रतिवादियों को अभिरक्षा शुरू होने के 24 घंटे के भीतर मजिस्ट्रेट के सामने पेश नहीं किया गया और हिरासत को अनुच्छेद 22 (2) का उल्लंघन पाया गया। इन तथ्यों पर बहुमत (न्यायमूर्ति के. सुब्बा रोआ-असंतुष्ट) ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

> " ..... यह सराहना करना बहुत मुश्किल है कि वास्तव में दोनों में से क्या है
>
> विद्वान न्यायाधीशों के मन में इन टिप्पणियों को रखने का विचार था

5 ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1506 गौतम नवलखा बनाम राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

कि अनुच्छेद 22 (2) के तहत गारंटी का उल्लंघन किया गया था। "दूसरे चरण" के दौरान जिस पर विद्वान न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया कि

अनुच्छेद 22 (2) के उल्लंघन के कारण नजरबंदी अवैध रही है, तथ्य ये थे: उत्तरदाताओं को एक संदेश पर लखनऊ वापस लाया गया था जिसमें उन्हें उच्च न्यायालय के समक्ष पेश करने की आवश्यकता थी। वे 25 तारीख को दोपहर 1 बजे लखनऊ पहुंचे और उसी दिन दोपहर 3 बजे यानी लखनऊ पहुंचने के दो घंटे के भीतर उप-पंजीयक के सामने पेश किए गए। उप-पंजीयक ने अगले दिन उन्हें पेश करने का निर्देश दिया था और वे उसी के अनुसार थे

पूर्व अभिरक्षा को अगले आदेश तक जारी रखने की अनुमति दी। उन्हें तदनुसार उस दिन दोपहर 2 बजे पेश किया गया था और 27 जुलाई, 1960 के एक और आदेश द्वारा विद्वान न्यायाधीशों ने प्रतिवादियों को जमानत पर रिहा करने का निर्देश दिया था और इस आदेश के अनुसरण में प्रतिवादियों को 27 जुलाई, 1960 को ही रिहा कर दिया गया था। इन परिस्थितियों में हम यह समझने से चूक गए हैं कि "दूसरे चरण" या "27 तारीख" के दौरान कौन सी अवधि है, जब उत्तरदाताओं को 24 से अधिक समय तक अवैध रूप से हिरासत में रखा गया था।

अनुच्छेद 22 (2) द्वारा आवश्यक न्यायिक प्राधिकरण के समक्ष पेश किए बिना घंटे। हम यह भी जोड़ेंगे कि भले ही अनुच्छेद 22 (2) का यह अर्थ लगाया गया हो कि गिरफ्तार किए गए और हिरासत में लिए गए व्यक्ति को उसकी नजरबंदी के दौरान हर 24 घंटे में मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना चाहिए, एक ऐसा अर्थ जो यह निश्चित रूप से सहन नहीं कर सकता है, हालांकि यह हमारे लिए स्पष्ट नहीं है कि क्या विद्वान न्यायाधीशों को इसकी आवश्यकता के लिए लेख समझ में नहीं आया था, यहां तक कि इस मामले में ऐसी आवश्यकता को पूरा किया गया था क्योंकि उत्तरदाता 26 तारीख को और फिर 27 तारीख को उच्च न्यायालय के समक्ष "उपयुक्त आदेशों के लिए" पेश किए गए "दूसरे चरण" के दौरान थे। हम विद्वान न्यायाधीशों के इस फैसले पर आगे कोई टिप्पणी नहीं करना चाहते हैं सिवाय इसके कि हम यह कहें कि सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट का कोई औचित्य नहीं था।

[20

21] 5 एस सी आर।

जो भी उस निष्कर्ष के लिए जिसके आधार पर विद्वान न्यायाधीश उत्तरदाताओं को रिहा करने का निर्देश दिया।

[जोर दिया

गया]

29. उपरोक्त तर्क के संदर्भ में अनुचित नहीं है

प्रत्यर्थी का मामला कि केवल एक मजिस्ट्रेट के तहत हिरासत को अधिकृत कर सकता है

धारा 167 Cr.PC।

दिल्ली के उच्च न्यायालय में प्रक्रियाएँ

30. अपीलार्थी द्वारा दायर रिट याचिका का उल्लेख पहले किया गया था

2 पर 28.08.2018 पर न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशः 15 पी. एम. निर्णय से, यह और स्पष्ट है कि इसे 2 बजे लिया गया थाः 45 उसी दिन अपराह्न। न्यायालय ने शुरू में आदेश दिया कि जब तक मामला 4 बजे फिर से नहीं उठाया जाता, तब तक अपीलार्थी को हटाने के लिए 'कोई त्वरित कार्रवाई नहीं की जाए': 00 पी. एम इस बीच, ऐसा प्रतीत होता है कि महाराष्ट्र पुलिस द्वारा दायर ट्रांजिट रिमांड आवेदन में, सीएमएम, साकेत ने आदेश पारित किया

पारगमन रिमांड आवेदन जिसे हमने निकाला है।

31. हमने आदेश की सामग्री पर भी ध्यान दिया है जो था

4 बजे पास कियाः 00 28.08.2018 पर अपराह्न। फैसले के अवलोकन से आगे पता चलता है कि महाराष्ट्र राज्य के वकील ने वास्तव में रिट की स्थिरता पर प्रारंभिक आपत्ति जताई थी। वह इस प्रकार है:

" 6. श्री विनय नवारे, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील

हाल के तारीख के फैसले पर निर्भर वर्तमान रिट याचिका का

5 सितंबर 2018 में सर्वोच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ

सीआरएल में। ए. 2018 का 1124 (महाराष्ट्र राज्य बनाम। तसनीम रिज़वान

सिद्दीक़ी)। उन्होंने प्रस्तुत किया कि उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि निर्णय, कानून में तय स्थिति को दोहराया, जैसा कि में समझाया गया है

मनुभाई रतिलाल पटेल बनाम में निर्णय गुजरात राज्य, (2013)

1 एस. सी. सी. 314 और सौरभ कुमार बनाम। जेलर, कोनिल जेल, (2014) 13 एस. सी. सी. 436, कि एक बार जब कोई व्यक्ति न्यायिक हिरासत में होता है

के संबंध में एक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड आदेश जाँच के तहत अपराध, बंदी प्रत्यक्षीकरण का एक रिट नहीं है

" 9. वर्तमान याचिका की स्थिरता के सवाल पर, जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, यह न्यायालय विद्वान गौतम नवलखा बनाम से भी पहले था।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

सी. एम. एम. ने रिमांड आवेदन पर आदेश पारित करते हुए 28 अगस्त 2018 को दोपहर लगभग 2.45 बजे निर्देश दिया कि "जब तक मामला शाम 4 बजे फिर से नहीं उठाया जाता, तब तक याचिकाकर्ता को दिल्ली से हटाने की कोई त्वरित कार्रवाई नहीं की जाएगी।" श्री राहुल मेहरा, राज्य के लिए स्थायी वकील (एन. सी. टी. दिल्ली) ने अदालत को सूचित किया कि उन्होंने 28 अगस्त 2018 को दोपहर 2.54 बजे संबंधित पुलिस अधिकारियों को उपरोक्त अंतरिम आदेश से अवगत करा दिया था। हालांकि यह स्पष्ट नहीं है कि क्या विद्वान सीएमएम को वास्तव में इस अदालत के अंतरिम आदेश के बारे में सूचित किया गया था, याचिकाकर्ता के गिरफ्तारी ज्ञापन से पता चलता है कि उन्हें दोपहर 2.15 बजे नेहरू एन्क्लेव में उनके आवास पर गिरफ्तार किया गया था। साकेत अदालत परिसर तक पहुँचने में लगे उचित समय को देखते हुए, यह संभावना नहीं है कि विद्वान सी. एम. एम. ने मामले की सुनवाई की। रिमांड आवेदन और फिर दोपहर 2.45 बजे से पहले आदेश पारित किया, अर्थात।

इसके पूर्व न्यायालय ने अंतरिम आदेश पारित किया।

10. नतीजतन, जब वर्तमान बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका थी

उपरोक्त अंतरिम आदेश इस न्यायालय द्वारा पारित किया गया था, याचिकाकर्ता के पारगमन रिमांड को मंजूरी देने वाले विद्वान सीएमएम का कोई आदेश नहीं था। श्री नवलखा द्वारा उद्धृत उपरोक्त प्रत्येक निर्णय में बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका पर विचार किया गया है।

उच्च न्यायालय द्वारा संबंधित न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित पारगमन रिमांड आदेश के बाद किया गया था। यह एक कारक वर्तमान मामले को उपरोक्त मामलों से अलग करता है। नतीजतन, यह न्यायालय श्री नवकरे द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति को खारिज कर देता है।

वर्तमान रिट याचिका की स्थिरता के बारे में।

33. इसके बाद उच्च न्यायालय ने यह पाया कि एक मजिस्ट्रेट के समक्ष भी, जिसके समक्ष पारगमन रिमांड आवेदन दायर किया गया है, धारा 167 की अनिवार्य आवश्यकता यह है कि मामले में प्रविष्टियाँ

पारगमन रिमांड के लिए। जबकि पारगमन रिमांड आवेदन की जांच करने वाले मजिस्ट्रेट को सामग्री की पर्याप्तता में जाने की आवश्यकता नहीं है, वह सामग्री के अस्तित्व के बारे में खुद को संतुष्ट करने के लिए बाध्य है। उन्होंने आगे पाया कि मजिस्ट्रेट गिरफ्तार व्यक्ति से यह पूछने के लिए बाध्य है कि क्या वास्तव में, उसे गिरफ्तारी के आधार के बारे में सूचित किया गया है और क्या उसे किसी कानूनी व्यवसायी से परामर्श करने और बचाव करने की आवश्यकता है। अपनी पसंद से। हालांकि, कानूनी सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के तहत सूचीबद्ध एक कर्तव्य वकील को अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करते हुए दिखाया गया था, उच्च न्यायालय ने देखा कि मजिस्ट्रेट ने गिरफ्तार किए गए [2021] 5 एस. सी. आर. के वकील से नहीं पूछा।

व्यक्ति क्या उसे गिरफ्तारी के आधार के बारे में सूचित किया गया था और क्या उसने अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी से परामर्श करने और बचाव करने के लिए कहा था। उच्च न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि यह आवश्यकता केवल इसलिए कम नहीं होती है क्योंकि कार्यवाही पारगमन रिमांड के लिए होती है। यह संविधान के अनुच्छेद 22 (1) के तहत अधिदेश पाया गया था। इसका स्वरूप.

कर्तव्य वकील का अनिवार्य रूप से कॉस्मेटिक पाया गया था न कि

अनुच्छेद 22 (1) की वास्तविक भावना। केस डायरी की सामग्री मराठी भाषा में लिखी हुई पाई गई। यह निर्विवाद पाया गया कि मजिस्ट्रेट मराठी भाषा से परिचित नहीं थे। इसने मजिस्ट्रेट को यह समझने से अक्षम कर दिया कि क्या Cr.P.C की धारा 41 (1) (b) (a) के तहत आवश्यकताएं पूरी हुई हैं। इसके बाद यह देखा गया कि न्यायालय ने निष्कर्षों और निर्देशों के साथ रिट याचिका का निपटारा किया

पैराग्राफ 28,29,30 और 31 में उल्लेख किया गया है जिसे हम पहले ही निकाल चुके हैं।

34. फैसले के खिलाफ एसएलपी का निपटारा निम्नानुसार किया गया था:

11.08.2020 :

" विद्वान महान्यायवादी और विद्वान वकील को सुना

मामले में विस्तार से दिखाई देता है।

विद्वान महान्यायवादी ने प्रस्तुत किया है कि उच्च न्यायालय को मामले में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था और आदेश को नहीं करना चाहिए था

पारित किया गया है और यह स्पष्ट रूप से अवैध है। सुश्री निथ्या विद्वान वकील रामकृष्णन ने प्रस्तुत किया है कि आदेश बिल्कुल सही है और आदेश में कोई हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं है।

चाहे जो भी हो, यह अभ्यास अकादमिक प्रकृति का है और अभियुक्तों ने इस न्यायालय द्वारा 08.04.2020 पर पारित आदेश के अनुसार 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण कर दिया है। हम अंदर जाने का प्रस्ताव नहीं करते हैं प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियाँ, क्योंकि याचिकाओं को व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए निष्फल बना दिया गया है।

हालाँकि, हम निर्देश देते हैं कि विवादित आदेश को किसी अन्य मामले के लिए एक मिसाल के रूप में नहीं माना जाएगा, कानून के प्रश्नों को खुला रखा जाता है। विशेष अवकाश याचिकाएँ और लंबित वार्ताकार

आवेदन (ओं), यदि कोई हो, का निपटारा कर दिया जाता है।
आवास आगंतुक की प्रकृति

35. उच्च न्यायालय ने विवादित आदेश में स्वयं पाया है कि अपीलार्थी द्वारा नजरबंदी में बिताए गए 34 दिनों की अवधि गौतम नवलखा बनाम के बराबर है।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [कि. एम. जोसेफ, जे.]डी। हालाँकि, हम नजरबंदी की प्रकृति के बारे में अपने विचारों को स्पष्ट करना आवश्यक समझते हैं।

36. जे. रॉबर्ट लिली और रिचर्ड ए. बॉल के एक लेख "ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ हाउस अरेस्ट एंड इलेक्ट्रॉनिक टॉरिंग" में हम निम्नलिखित पाते हैं -

एस. एस. एन.:

" घरेलू सम्मेलन "नजरबंदी" का एक लंबा इतिहास रहा है

कम से कम सेंट पॉल द एपोस्टल, जिनके बारे में बताया जाता है कि उन्हें लगभग 60 वर्ष की आयु में रोम में "घर में नजरबंद" (कस्टोडिया लिबेरा) रखा गया था। सेंट पॉल की सजा दो साल तक चली, जिस दौरान उन्होंने किराए का भुगतान किया और तंबू बनाने वाले के रूप में अपना घर कमाया, इस प्रकार चर्च या राज्य का वार्ड बनने से बच गए। हालांकि यह दावा करना ऐतिहासिक रिकॉर्ड से बहुत आगे जाएगा कि सेंट पॉल नजरबंदी की शर्तों के तहत उन्हें रखने के लिए भुगतान करने वाले पहले व्यक्ति थे, यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि आज के कई "नजरबंदी" कार्यक्रम अपने ग्राहकों से पर्यवेक्षण शुल्क, क्षतिपूर्ति और उनके रहने के खर्च का भुगतान करने की उम्मीद करते हैं। फ्लोरेंटाइन दार्शनिक, भौतिक विज्ञानी और खगोलशास्त्री गैलीलियो गैलीली ने भी 1633 में रोम में "दूसरी निंदा" परीक्षण के बाद "नजरबंदी" का अनुभव किया। मुकदमे के बाद, वह फ्लोरेंस लौट आए और अपने शेष जीवन के लिए नजरबंद रहे। हाल ही में, रूस के ज़ार निकोलस द्वितीय और उनके परिवार को 1917 में 1918 में उनकी मृत्यु तक नजरबंद रखा गया था। राजनीतिक असहमति को चुप कराने के साधन के रूप में इस प्रथा के पारंपरिक उपयोग के कारण यह इतिहास कुछ लोगों के बीच चिंता का कारण है। उदाहरण के लिए, दक्षिण अफ्रीका में "प्रतिबंध" के माध्यम से नियंत्रण का एक लंबा इतिहास रहा है और पोलैंड, दक्षिण कोरिया, भारत और सोवियत संघ में पाए जाने वाले समाजों को मुख्य रूप से परेशान करने वाले राजनीतिक असंतुष्टों से निपटने के लिए "नजरबंदी" का उपयोग करने के लिए जाना जाता है। दूसरी ओर, फ्रांस ने 1970 में नियंत्रण न्यायपालिका की अवधारणा को पूर्व परीक्षण निरोध के एक काफी सीधे रूप के रूप में पेश किया जिसमें एक प्रावधान शामिल था जो घर को नियोजित करता था।

आम अपराधियों के लिए एक विकल्प के रूप में कारावास। 1975 में, इटली ने प्रोवो ऐ सर्विसिओ सोशल (परीक्षण हिरासत) में एफिडमेंटो की नीति शुरू की, जिसे तीन महीने की कारावास की सदमे की अवधि के बाद पैरोल के रूप में वर्णित किया जा सकता है। अन्य यूरोपीय देशों ने भी विभिन्न प्रकार के मामलों से निपटने के साधन के रूप में कुछ प्रकार के घरेलू कारावास का प्रयोग किया है। अपराधी। "नजरबंदी" का पारंपरिक उपयोग अपने आप में इसे अस्वीकार करने का एक तर्क नहीं बनना चाहिए। संयुक्त राज्य अमेरिका में, सेंट लुइस में 1971 की शुरुआत में "घर में नजरबंदी" का अभ्यास किया गया था।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

वयस्क अपराधियों के साथ उपयोग के लिए एक नीति के रूप में गृह कारावास ने 1983 में इस विषय पर दो अलग-अलग पत्रों के वितरण के साथ अधिक ध्यान आकर्षित करना शुरू किया, सुधारात्मक सुधार अधिनियम का पारित होना।

और न्यू मैक्सिको में एक अपराधी की ओर से घरेलू कारावास के अनुपालन की निगरानी के लिए एक "इलेक्ट्रॉनिक कंगन" का उपयोग।

उत्तरार्द्ध न्यू मैक्सिको जिला अदालत के एक न्यायाधीश से प्रेरित था,

जिन्होंने एक कॉमिक स्ट्रिप पढ़ी जिसमें "स्पाइडरमैन" को उनकी कलाई पर लगे एक ट्रांसमीटर द्वारा ट्रैक किया जा रहा था। न्यायाधीश ने एक इंजीनियर से संपर्क किया,

जिसने एक इलेक्ट्रॉनिक कंगन से युक्त उपकरण तैयार किया था

लगभग सिगरेट के एक पैकेट का आकार जो एक उत्सर्जित करता है इलेक्ट्रॉनिक संकेत जिसे एक रिसीवर द्वारा उठाया गया था

घर का फोन। इस कंगन को टखने से बांधा जा सकता है

एक अपराधी इस तरह से कि अगर वह उससे अधिक स्थानांतरित होता है

घर के टेलीफोन से लगभग 150 फीट की दूरी पर, संचरण संकेत टूट जाएगा, जिससे अधिकारियों को सचेत किया जाएगा कि अपराधी परिसर छोड़ चुका है। न्यू मैक्सिको में अधिकारियों ने उपकरण के परीक्षण उपयोग के लिए मंजूरी दी और राष्ट्रीय न्याय संस्थान द्वारा वित्त पोषित एक शोध परियोजना ने अंततः इसके साथ सफल परिणामों की सूचना दी।

" इलेक्ट्रॉनिक निगरानी "।

37. संयुक्त राज्य अमेरिका में, दिसंबर 1985 में, एक सुश्री मर्फी

बीमा धोखाधड़ी के एक मामले में दोषी ठहराया गया। उन्हें अधिकतम 50 साल की अवधि के लिए जेल में रखा जा सकता था। इसके बजाय, संघीय न्यायाधीश ने उसे नजरबंद कर दिया (देखें 108 एफ. आर. डी. 437,439 (E.D.N.Y. 1985)। संघीय न्यायाधीश ने अन्य बातों के साथ-साथ यह आदेश दिया: -

" मौरीन मर्फी को सजा सुनाने के लिए, अदालत की राय में, एक ऐसे वाक्य की आवश्यकता होती है जिसका उपयोग इस जिले में पहले कभी नहीं किया गया था और देश में संघीय अदालत में लगभग कभी उपयोग नहीं किया गया था। इसका उपयोग दुनिया में कहीं और किया जाता है और कुछ लोगों द्वारा

इसे अत्यधिक आपत्तिजनक माना जाता है। हालांकि, अंतर यह है कि अन्य देशों में इसका उपयोग राजनीतिक असंतोष को दबाने और मुकदमे से पहले किया जाता है। यहाँ इसका उपयोग पूर्ण अवधि के बाद किया जाएगा।

मुकदमा जहाँ प्रतिवादी को गंभीर अपराध का दोषी पाया गया है

अपराध। सजा है नजरबंदी।

" "

उन्हें केवल चिकित्सा कारणों, रोजगार, धार्मिक सेवाओं या आवश्यक खाद्य खरीदारी करने के लिए अपने अपार्टमेंट से बाहर निकलने की अनुमति दी गई थी। संयुक्त राज्य अमेरिका में नजरबंदी को अनिवार्य रूप से एक मध्यवर्ती स्तर की दंडात्मक मंजूरी के रूप में नियोजित किया गया है। दूसरे शब्दों में, दोषी पाए जाने पर

दोषी को कारावास की सजा देने के बजाय और कारावास के बदले, परिवीक्षा की शर्त के रूप में, दोषी को गौतम नवलखा v के लिए मजबूर किया जाता है।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]स्वयं अपने निवास स्थान पर नहीं। दिलचस्प बात यह है कि संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के तहत दिए गए संस्थागत संरक्षण के अनुरूप, गैर-कानूनी गिरफ्तारी दोषी से उसके घर से बाहर निकलने पर पूर्ण प्रतिबंध के साथ नहीं मिलती है। लेख "हाउस अरेस्ट" में, जेफरी एन. हर्विट्ज़ द्वारा एक महत्वपूर्ण विश्लेषण मध्यवर्ती स्तर की दंडात्मक मंजूरी, हम देखते हैं

बहती हुई:

" नजरबंदी गहन कानून प्रवर्तन पर्यवेक्षण का एक रूप है जिसकी विशेषता केवल स्पष्ट, पूर्व-अधिकृत उद्देश्यों के लिए जाने की अनुमति के साथ अपराधी के निवास स्थान पर कारावास है। आम तौर पर, इसे कारावास के बदले दंडात्मक मंजूरी के रूप में लगाया जाता है।

और सजा सुनाने वाले न्यायाधीश द्वारा परिवीक्षा की शर्त के रूप में अनिवार्य किया गया। हालाँकि, फ्लोरिडा में, नजरबंदी को परिवीक्षा से पूरी तरह अलग एक आपराधिक मंजूरी माना जाता है। इसके अलावा, कम से कम एक अधिकार क्षेत्र ने उन व्यक्तियों के लिए नजरबंदी का उपयोग करने की सूचना दी है जिन्हें किया गया है मुकदमे की प्रतीक्षा करते हुए अपनी पहचान पर रिहा कर दिया गया।

उदाहरण के लिए, कई राज्यों और काउंटियों ने हाल ही में परिवीक्षा कार्यक्रमों में गहन पर्यवेक्षण जोड़ा है ताकि चयनित लोगों के लिए कारावास के बदले एक मध्यवर्ती सजा प्रदान की जा सके।

अपराधी। गहन पर्यवेक्षण रणनीतियों की कई रिपोर्ट की गई शर्तें नजरबंदी की मंजूरी के हिस्से के रूप में लगाई गई शर्तों के समान या समान हैं। उदाहरण के लिए, अपराधियों और परिवीक्षा अधिकारियों के बीच कई साप्ताहिक संपर्क, साथ ही साथ अनिवार्य भी।

रोजगार, दोनों नियंत्रण तकनीकों के लिए सामान्य हो सकता है।

अपराधी की घर छोड़ने की स्वतंत्रता पर अनूठा प्रतिबंध नजरबंदी की मंजूरी की विशिष्ट विशेषता है। हालाँकि अन्य बढ़े हुए निगरानी प्रतिबंधों में आम तौर पर सख्त कर्फ्यू शामिल होते हैं, लेकिन घर में नजरबंदी अपराधी को केवल विशिष्ट उद्देश्यों के लिए अपना निवास छोड़ने की अनुमति देती है, जब तक कि घर से दूर बिताए गए समय का उपयोग पूर्व-अधिकृत उद्देश्यों के लिए नहीं किया जाता है, अपराधी को हिरासत में लेने का जोखिम होता है और

कारावास। फ़्लोरिडा कम्युनिटी कंट्रोल क़ानून आदेश देता है कि अदालत "सामुदायिक नियंत्रण में रखे गए अपराधी के लिए गहन पर्यवेक्षण और निगरानी लागू करे, जिसमें शामिल हो सकता है. रोजगार और सार्वजनिक सेवा गतिविधियों से दूर घंटों के दौरान एक सहमत निवास पर कारावास। फ्लोरिडा कानून ने अनुमेय यात्रा के तीन स्तरों को वर्गीकृत किया है, जिनके लिए उद्देश्यों के अनुसार क्रमबद्ध किया गया है।

कारावास स्थल से दूर समय बिताना।" आवश्यक यात्रा "[2021] 5 एस. सी. आर.

इसमें काम, धार्मिक अभिव्यक्ति, व्यावसायिक या अन्य उद्देश्यों के लिए यात्रा शामिल है।

शैक्षिक प्रशिक्षण, स्व-सुधार कार्यक्रम, लोक सेवा, और पर्यवेक्षण अधिकारी के साथ निर्धारित नियुक्तियाँ।

"सामुदायिक नियंत्रक की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने" की दिशा में घर से आवाजाही को "स्वीकार्य यात्रा" माना जाता है। तीनों प्रकार की यात्राओं को पहले से ही अनुमोदित किया जाना चाहिए, हालांकि पारिवारिक आपात स्थितियों के लिए आवाजाही पूर्व-प्राधिकरण के बिना हो सकती है बशर्ते कि उन्हें बाद में सूचित किया जाए।

अगले दिन। हम उक्त लेख में निम्नलिखित चर्चा को भी देख सकते हैं: -

यह और भी अधिक नियंत्रण स्थापित करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में वी। वेइट 3 प्रतिवादी को चयनात्मक सेवा प्रणाली के साथ पंजीकरण करने में विफलता के लिए दोषी ठहराया गया था। सजा के अधिरोपण को निलंबित कर दिया गया और प्रतिवादी को छह महीने के लिए परिवीक्षा पर रखा गया। अदालत ने आदेश दिया कि पूरी परिवीक्षा अवधि वेइट की दादी के आवास पर नजरबंदी में बिताई जाए, और वेइट को केवल "परिवीक्षा अधिकारी की अनुमति से आपातकालीन उद्देश्यों" के लिए अपने कारावास स्थल को छोड़ने की अनुमति दी जाए। 3 " वाइटे में नजरबंदी शासन सबसे अधिक प्रतिबंधात्मक है लेकिन फिर से लागू किया गया है। क्योंकि वेइट घर से बाहर निकलने में बिल्कुल भी असमर्थ है, इसलिए वह बाहरी रोजगार प्राप्त करने से वंचित है। उसके कारावास स्थल से सभी यात्राएँ केवल एक जानलेवा संकट के जवाब में होनी चाहिए; जाहिर है, यहाँ तक कि धार्मिक अभिव्यक्ति के लिए आंदोलन भी होना चाहिए

परिवीक्षा अधिकारी द्वारा आपात स्थिति के रूप में अनुमोदित। वह है।

कार्यात्मक रूप से अलग और बाहरी दुनिया से हटा दिया गया, जैसे कि वह

जेल में थे, उनकी पत्नी उनके साथ मध्यस्थ के रूप में कार्य करती है

समुदाय "।

38. "नजरबंदी के लक्षय" शीर्षक में, हम विंग चर्चा को देखते हैं: -

" फिर भी नजरबंदी, जिसे आम तौर पर परिवीक्षा की एक विशेष शर्त के रूप में लगाया जाता है, में एक स्पष्ट रूप से प्रतिशोधात्मक घटक शामिल होता है। 42 द.

मर्फी डी-स्क्राइब में सजा सुनाने वाली अदालत ने शामिल किया

परिवीक्षा की पारंपरिक रूप से उपशामक योजना में प्रतिशोध, अपमान और निवारण: कुछ लोग होंगे जो मानेंगे कि यह वाक्य बहुत अधिक उदार है। अन्य लोग भी इस पर विश्वास करेंगे गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

अपमानजनक। सार्वजनिक अपमान सजा का एक हिस्सा है। कई मायनों में स्टॉक के औपनिवेशिक उपयोग और अन्य समाजों में समान दंड ने एक निवारक के रूप में तेजी से सामाजिक अस्वीकृति प्रदान करने में एक उपयोगी लक्षय की सेवा की। यह स्पष्ट है कि कुछ

इस अस्वीकृति का रूप आधुनिक परिस्थितियों में आवश्यक है।

39. नजरबंदी को बढ़ावा देने में जिन फायदों को माना गया है, उनमें जेलों में भीड़भाड़ से बचना भी शामिल है

40. उक्त लेख में नजरबंदी को समुदाय आधारित परिवीक्षाधीन मंजूरी के रूप में वर्णित किया गया है। हम निम्नलिखित चर्चा को भी देख सकते हैं। छूट और परिवीक्षा अनुग्रह का कार्य होने के शीर्षक के तहतः -

" इसके अलावा, घर में कैद की विशेष रूप से प्रतिबंधात्मक प्रकृति के कारण, निहित संवैधानिक अधिकार को माफ नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी बंदी का आवास घटिया है, तो राज्य द्वारा लगाया गया गृह कारावास क्रूर और असामान्य सजा पर आठवें संशोधन प्रतिबंध का उल्लंघन कर सकता है। इसी प्रकार यह भी

संभावना है कि अपराधी एक ऐसे अधिकार का त्याग कर सकता है जो राज्य के लिए अन्यायी नहीं है। यदि गृह कारावास के शासन में पूजा के घर तक पहुंच शामिल नहीं है, तो राज्य ने अपराधी से पहले के स्वतंत्र अभ्यास खंड द्वारा गारंटीकृत पूजा की स्वतंत्रता के अपरिहार्य अधिकार की छूट या हस्तांतरण के लिए मजबूर किया होगा।

संशोधन।

[ईसी द्वारा लिए गए निर्णय का संदर्भ लें। रूसी का भी उल्लेख करें।] "

दोषी हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसका सहारा किशोरों के संबंध में भी लिया गया है। उसके विरुद्ध कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान।

42. बुज़ादजी बनाम। मोल्डोवा; 398 बटरवर्थ्स मानवाधिकार मामले 42, यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय (ग्रैंड चैंबर), मानव अधिकार और मौलिक स्वतंत्रता के संरक्षण के लिए कन्वेंशन, 1950 के अनुच्छेद 34 के तहत दर्ज मोल्डोवा गणराज्य के खिलाफ एक मामले पर विचार कर रहा था। इन प्रश्नों पर विचार करते हुए कि क्या आवेदक स्वतंत्रता से वंचित है और क्या आवेदक ने अन्य बातों के साथ-साथ स्वतंत्रता के अपने अधिकार को माफ कर दिया था, न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:

एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

आवागमन की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध अनुच्छेद 5 में शामिल नहीं हैं। लेकिन प्रोटोकॉल संख्या 4 के अनुच्छेद 2 (1) के तहत आता है। हालाँकि, आंदोलन के प्रतिबंध और स्वतंत्रता से वंचित होने के बीच का अंतर

यह केवल एक डिग्री या तीव्रता का है, न कि प्रकृति या पदार्थ का। यह निर्धारित करने के लिए कि क्या किसी को अनुच्छेद 5 के अर्थ के भीतर 'अपनी स्वतंत्रता से वंचित' किया गया है, प्रारंभिक बिंदु ठोस स्थिति होनी चाहिए और मानदंडों की एक पूरी श्रृंखला को ध्यान में रखा जाना चाहिए जैसे कि प्रश्नगत उपाय के प्रकार, अवधि, प्रभाव और कार्यान्वयन का तरीका (देखें गुज़ार्दी बनाम इटली (1980) 3 ईएचआरआर 333, [1980] ईसीएचआर 7367/76, पैरा 92 93)।

अदालत के मामले के कानून के अनुसार (देखें, कई अन्य लोगों के बीच, मानचिनी बनाम इटली (ऐप नंबर 44955/98) (फैसला, 2 अगस्त), पैरा 17; लावेंट्स बनाम लातविया (ऐप नंबर 58442/00) (फैसला, 28 नवंबर)

2002) , पैरा 64-66; निकोला बनाम बुल्गारिया (नंबर 2) [2004] ईसीएचआर

(निर्णय, 15 जुलाई 2014), पैरा 53; और डेलीजोर्गजी बनाम अल्बानिया [2015] ईसीएचआर 6858/11, पैरा 75), नजरबंदी को, इसकी डिग्री और तीव्रता को देखते हुए, कन्वेंशन के अनुच्छेद 5 के अर्थ के भीतर स्वतंत्रता से वंचित करने के बराबर माना जाता है। स्टॉर्क बनाम जर्मनी (2005) 43 ई. एच. आर. आर. 96, [2005] ई. सी. एच. आर. 61603/00, पैरा 75 में अदालत ने अभिनिर्धारित किया कि कन्वेंशन के अर्थ के भीतर एक 'लोकतांत्रिक समाज' में स्वतंत्रता का अधिकार किसी व्यक्ति के लिए कन्वेंशन के संरक्षण का लाभ खोने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि वह खुद को हिरासत में लेने के लिए छोड़ देता है। निरोध अनुच्छेद 5 का उल्लंघन कर सकता है, भले ही संबंधित व्यक्ति इसके लिए सहमत हो गया हो (डी वाइल्ड बनाम बेल्जियम (1971) 1 ईएचआरआर 373, [1971] ईसीएचआर 2832/66, पैरा 65 देखें)।"

हम यह भी देख सकते हैं: " सरकार ने कहा कि सामान्य रिमांड सुविधा में नजरबंदी की तुलना में नजरबंदी को सही ठहराने के लिए कम कारणों की आवश्यकता थी क्योंकि पहला उपाय बाद वाले की तुलना में अधिक उदार था।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

यह सच है कि ज्यादातर मामलों में नजरबंदी का मतलब जेल में सामान्य नजरबंदी की तुलना में कम प्रतिबंध और बंदी के लिए कम पीड़ा या असुविधा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि हिरासत में हिरासत में रखने के लिए व्यक्ति को एक नए में एकीकृत करने की आवश्यकता होती है और

कभी-कभी शत्रुतापूर्ण वातावरण, अन्य कैदियों के साथ गतिविधियों और संसाधनों को साझा करना, अनुशासन का पालन करना और अधिकारियों द्वारा अलग-अलग डिग्री की निगरानी के अधीन होना दिन में चौबीस घंटे। उदाहरण के लिए, बंदी स्वतंत्र रूप से यह नहीं चुन सकते हैं कि कब सोना है, कब खाना खाना है, कब खाना खाना है। स्वच्छता की आवश्यकताएँ या बाहर व्यायाम या अन्य कब करना है

गतिविधियाँ। इसलिए, जब एक विकल्प का सामना करना पड़ता है

(ऊपर पैरा 92 देखें)। यह आगे दोहराता है कि लावेंट्स में (उद्धृत) ऊपर), जहां अदालत को काफी समय तक मुकदमे के लंबित रहने तक आवेदक को स्वतंत्रता से वंचित करने के कारणों की प्रासंगिकता और पर्याप्तता की जांच करने के लिए कहा गया था, प्रत्यर्थी सरकार ने असफल तर्क दिया था कि विभिन्न मानदंडों को लागू करना चाहिए।

आक्षेपित के कारणों के मूल्यांकन के लिए आवेदन करना

स्वतंत्रता पर प्रतिबंध क्योंकि आवेदक को न केवल जेल में बल्कि घर में नजरबंद और अस्पताल में भी रखा गया था। अदालत ने यह कहते हुए तर्क को खारिज कर दिया कि अनुच्छेद 5 को विनियमित नहीं करता है निरोध की शर्तें, पहले के दृष्टिकोण का उल्लेख करते हुए

मैनसिनी में अपनाया गया (ऊपर उद्धृत) और उसमें उद्धृत अन्य मामले। अदालत ने यह निर्दिष्ट किया कि मामले के कानून में 'डिग्री' और 'तीव्रता' की धारणाएं, अनुच्छेद 5 की प्रयोज्यता के मानदंड के रूप में, केवल आवाजाही की स्वतंत्रता के लिए प्रतिबंधों की डिग्री को संदर्भित करती हैं, न कि आराम में अंतर या हिरासत के विभिन्न स्थानों में आंतरिक शासन में। इस प्रकार, न्यायालय स्वतंत्रता से वंचित होने की पूरी अवधि के लिए समान मानदंड लागू करने के लिए आगे बढ़ा, चाहे कोई भी हो।

उस स्थान का जहाँ आवेदक को हिरासत में लिया गया था। भारत में हाउस एरेस्ट

43. भारत में, नजरबंदी की अवधारणा की जड़ें निवारक निरोध के कानूनों में निहित हैं। राष्ट्रीय सुरक्षा 1980 की धारा 5 निवारक निरोध का प्रावधान करने वाला एक कानून है। धारा 5 इस प्रकार हैवीएसः

21] 5 एस सी आर।

(क) ऐसे स्थान पर और ऐसी शर्तों के तहत हिरासत में लिया जाना, जिसमें रखरखाव, अनुशासन और सजा जैसी शर्तें शामिल हैं। अनुशासन का उल्लंघन, जैसा कि उपयुक्त सरकार, द्वारा

सामान्य या विशेष क्रम, निर्दिष्ट करें; और

((ख) उपयुक्त सरकार के आदेश से निरोध के एक स्थान से दूसरे स्थान पर, चाहे वह उसी राज्य के भीतर हो या किसी अन्य राज्य में, हटाया जाना: बशर्ते कि किसी व्यक्ति को एक राज्य से दूसरे राज्य में हटाने के लिए खंड (बी) के तहत किसी राज्य सरकार द्वारा उस दूसरे राज्य की सरकार की सहमति के अलावा कोई आदेश नहीं दिया जाएगा। अनुच्छेद 22 (3) इस प्रकार है: -

" 22 (3) . खंड (1) और (2) में कुछ भी लागू नहीं होगा।

(क) किसी भी व्यक्ति के लिए जो कुछ समय के लिए एक दुश्मन विदेशी है; या

(ख) किसी भी व्यक्ति को जो किसी कानून के तहत गिरफ्तार या हिरासत में लिया गया है।

निवारक निरोध का प्रावधान "।

इस प्रकार, अनुच्छेद 22 (1) और अनुच्छेद 22 (2) के तहत सुरक्षा उपाय निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले कानून के तहत उपलब्ध नहीं हैं। 44. हम देखते हैं कि राजस्थान राज्य और अन्य। बनाम शमशेर सिंह 'उक्त अधिनियम के तहत एक मामला था। यह एक ऐसा मामला था जिसमें उच्च न्यायालय ने कुछ आधारों पर हिरासत के आदेश को रद्द करने के बाद दिया था

कुछ दिशाएँ। बंदी को केंद्रीय जेल से रिहा किया जाना था, लेकिन उसके बाद यह निर्देश दिया गया कि बंदी को घर में नजरबंद किया जाए या डाक बंगला या सर्किट हाउस की तरह उसकी पत्नी और बच्चों वाले परिवार के सदस्यों के साथ रखा जाए। यदि बंदी को घर के बाहर रखा जाता है तो अधिकारियों को अन्य रिश्तेदारों के साथ भी साक्षात्कार की अनुमति देनी थी। इस न्यायालय ने राज्य की अपील को स्वीकार करते हुए पाया कि निरोध के संबंध में कानून की आवश्यकताओं का पालन किया गया था और निरोध को गलत तरीके से रद्द कर दिया गया था। ए. के. रॉय और ओआरएस में। बनाम संघ

6 आकाशवाणी (1985) एससी 1082 7 एयर (1982) एससी 710 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

" 74. धारा 5 द्वारा, प्रत्येक व्यक्ति जिसके संबंध में एक निरोध

आदेश दिया गया है जो उत्तरदायी है

ए। ऐसे स्थान पर और ऐसी शर्तों के तहत हिरासत में लिया जाना, जिसके लिए रखरखाव, अनुशासन और सजा जैसी शर्तें शामिल हों।

अनुशासन का उल्लंघन, जैसा कि उपयुक्त सरकार, सामान्य या विशेष आदेश द्वारा निर्दिष्ट कर सकती है: और

उपयुक्त सरकार। इन प्रावधानों की अनुचितता के आधार पर याचिकाकर्ताओं की आपत्ति पूरी तरह से आधारहीन नहीं है। निवारक निरोध के कानून, पिछले दरवाजे से, दंडात्मक प्रकार के प्रक्रियात्मक उपायों को लागू नहीं कर सकते हैं। बिना मुकदमे के हिरासत में लेना एक बुराई है जिसका सामना करना पड़ता है, लेकिन इससे अधिक और इससे अधिक कुछ नहीं।

निर्दिष्ट करें। सामान्य नियम यह होना चाहिए कि बंदी को उस स्थान पर हिरासत में रखा जाएगा जो उसके परिवेश के भीतर हो। सामान्य निवास स्थान। यदि कोई व्यक्ति आम तौर पर दिल्ली में रहता है, तो उसे मद्रास या कलकत्ता जैसे दूर के स्थान पर हिरासत में रखना अपने आप में एक दंडात्मक उपाय है, जिसे किसी भी तरह से निवारक हिरासत के मामलों में प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए। इसके अलावा, किसी व्यक्ति को उस स्थान के अलावा किसी अन्य स्थान पर हिरासत में रखने से जहां वह आदतन रहता है, उसके दोस्तों और रिश्तेदारों के लिए उससे मिलना या हिरासत में लिए गए व्यक्ति के लिए अपना भोजन रखने जैसी सुविधाओं का लाभ उठाना असंभव हो जाता है। प्रशासनिक सुविधा, सुरक्षा और सुरक्षा की आवश्यकताएँ किसी दिए गए मामले में हस्तांतरण को उचित ठहरा सकती हैं।

जहाँ वह सामान्य रूप से रहता है, उसके अलावा किसी अन्य स्थान पर रोक दिया जाता है, लेकिन वह केवल एक अपवाद के रूप में हो सकता है और सामान्य नियम के रूप में नहीं। यहां तक कि जब किसी बंदी को किसी ऐसे स्थान पर रखने या स्थानांतरित करने की आवश्यकता होती है जो उसके सामान्य स्थान से अलग हो।

उसे किसी भी दूर के स्थान पर नहीं भेजा जाना चाहिए, जो अपनी दूरी के कारण उसे उन सुविधाओं से वंचित कर सकता है जिनके वह हकदार है। सजा जो भी हो।

निवारक निरोध के मामलों में ईमानदारी से बचना चाहिए। ”

45. इस प्रकार भारत में 'निवारक निरोध' से संबंधित कानून के तहत 'नजरबंदी' का सहारा लिया गया है। हालाँकि क्या प्रासंगिक है [2021] 5 एस. सी. आर.

यह है कि निवारक निरोध भी जबरन निरोध का एक रूप है। नजरबंदी हिरासत और जबरन हिरासत भी है।

46. के रूप में क्या इस तरह की नजरबंदी के तहत हिरासत के रूप में योग्य होगा

जब हम संबंधित प्रावधान पर चर्चा करेंगे तो धारा 167 पर विचार किया जाएगा - Cr.P.C की धारा 428 के तहत बंद कर दिया गया।

भारत में जेलों पर एक नज़र

47. राष्ट्रीय अपराध द्वारा प्रकाशित कार्यकारी सारांश

2019 के लिए अभिलेख ब्यूरो इस प्रकार है: -

" जेल सांख्यिकी भारत-2019

कार्यकारी सारांश

कारागार-प्रकार और अधिभोग

कैदियों की वास्तविक क्षमता

जेलों की संख्या

अधि

भोग दर

वर्ष

अंत में

वर्ष

का अंत

प्रियोजन्स

वर्ष

1,361

115

.1 %

2017

4,50,696

3,91,574

117

.6 %

4,66,084

2018

1,339

3,96,223

2019

4,03,739

118

.5 %

1,350

4,78,600

1. राष्ट्रीय स्तर पर जेलों की कुल संख्या में वृद्धि हुई है

2018 में 1,339 से 2019 में 1,350 हो गया, जिसमें 0.82% की वृद्धि हुई है। 2. देश की 1,350 जेलों में 617 उप-जेल और 410 उप-जेल हैं।

जिला जेल, 144 केंद्रीय जेल, 86 खुली जेल, 41 विशेष जेल, 31 महिला जेल, 19 बोरस्टल स्कूल और 2 उपरोक्त जेलों के अलावा।

3. राजस्थान में जेलों की सबसे अधिक संख्या (144) दर्ज की गई। इसके बाद तमिलनाडु (141), मध्य प्रदेश (131), आंध्र प्रदेश हैं।

31 सेंट दिसंबर, 2019। 4. दिल्ली ने सबसे अधिक केंद्रीय जेलों (14) की सूचना दी है।

देश को। अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, अंडमान और निकोबार जैसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश

एन द्वीप, डी एंड एन हवेली, दमन और दीव और लक्षद्वीप में

31 दिसंबर, 2019 तक कोई केंद्रीय जेल नहीं थी।

5. उत्तर प्रदेश में जिला जेलों की संख्या सबसे अधिक है

(62) . गोवा, चंडीगढ़, दमन और निकोबार हवेली, दमन और निकोबार जैसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश

दीव, दिल्ली, लक्षद्वीप और पुडुचेरी में कोई जिला जेल नहीं है।

31 दिसंबर, 2019 को।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

6. तमिलनाडु ने उप-जेलों (96) की सबसे अधिक संख्या दर्ज की है। अरुणाचल प्रदेश, गोवा, हरियाणा, मेघालय, मिजोरम जैसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश

नागालैंड, सिक्किम, चंडीगढ़ और दिल्ली में 31 दिसंबर, 2019 तक उनके राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में कोई उप-जेल नहीं है।

7. भारत में 6,511 की कुल क्षमता के साथ केवल 15 राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में महिला जेल (31 महिला जेल) हैं। ये राज्य/केंद्र शासित प्रदेश (जेलों की संख्या, कैदियों की क्षमता) हैं-राजस्थान (7) (1048), तमिलनाडु (5) (2018), केरल (3) (232), आंध्र प्रदेश (2) (280), बिहार (2) (152), गुजरात (2) (410), दिल्ली (2) (648), कर्नाटक (1) (100),

महाराष्ट्र (1) (262), मिजोरम (1) (90), ओडिशा (1) (55), पंजाब (1) (320), तेलंगाना (1) (250), उत्तर प्रदेश (1) (420) और पश्चिम

बंगाल (1) (226) और शेष 21 राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में 31 दिसंबर, 2019 तक कोई अलग महिला जेल नहीं है।

8. जेलों की वास्तविक क्षमता 2018 में 3,96,223 से बढ़कर 2019 में 4,03,739 हो गई है (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को), जिसमें 1.90% की वृद्धि हुई है। विभिन्न जेलों में बंद कैदियों की संख्या 2018 में 4,66,084 से बढ़कर 2019 में 4,78,600 हो गई है (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को), इस अवधि के दौरान 2.69% की वृद्धि हुई है।

9. वर्ष 2019 में 1,350 जेलों की कुल क्षमता 4,03,739 में से देश की केंद्रीय जेलों में कैदियों की क्षमता (1,77,618) सबसे अधिक थी, इसके बाद जिला जेलों (1,58,986 कैदियों की क्षमता) और उप-जेलों (45,071 कैदियों की क्षमता) का स्थान था। अन्य प्रकार की जेलों में विशेष जेल, खुली जेल और महिला जेल शामिल हैं।

31 दिसंबर, 2019 तक जेलों की क्षमता क्रमशः 7,262,6,113 और 6,511 कैदियों की थी। सबसे अधिक संख्या

31 दिसंबर, 2019 तक कैदियों को केंद्रीय जेलों (2,20,021) और उसके बाद जिला जेलों (2,06,217) और उप जेलों (38,030) में रखा गया था। महिला जेलों में कैदियों की संख्या 3,652 थी।

10.उत्तर प्रदेश ने अपनी जेलों में सबसे अधिक क्षमता (72 जेलों में 60,340 कैदियों की क्षमता कुल क्षमता का 14.95% योगदान) दर्ज की है, इसके बाद बिहार (59 में 42,222 कैदियों की क्षमता) है।

जेलों का योगदान कुल क्षमता का 10.46% है) और मध्य प्रदेश (131 जेलों में 28,718 कैदियों की क्षमता कुल क्षमता का 7.1% है)। 11.4,78,600 कैदियों में से 4,58,687 पुरुष कैदी थे और 19,913 महिला कैदी थीं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

12.अधिभोग दर 2018 में 117.6% से बढ़कर 118.5 % 2019 में (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को)।

13.सबसे अधिक अधिभोग दर जिला जेलों में थी (129.7%)

इसके बाद केंद्रीय जेल (123.9%) और उप जेल (84.4%) हैं। द.

31 दिसंबर को महिला जेलों में रहने की दर 56.1% थी।

2019 .

14.उत्तर प्रदेश में कैदियों की संख्या सबसे अधिक है

(1,01,297) अपनी जेलों में 21.2% के बाद मध्य का योगदान प्रदेश (44,603), बिहार (39,814), महाराष्ट्र (36,798), पंजाब

(24,174) और 31 दिसंबर, 2019 तक पश्चिम बंगाल (23,092)।

ये राज्य मिलकर कुल का लगभग 56.4% योगदान दे रहे हैं।

देश में कैदी।

15.दिल्ली ने सबसे अधिक अधिभोग दर (174.9%) दर्ज की है।

इसके बाद उत्तर प्रदेश (167.9%) और उत्तराखंड (159.0%) हैं। 31 दिसंबर, 2019 तक।

16.31 महिला जेलों की क्षमता वास्तविक संख्या के साथ 6,511 थी।

इन महिला जेलों में महिला कैदियों की संख्या 3,652 थी। (अधिभोग दर: 56.1 %) . महिला कैदियों की क्षमता

अन्य प्रकार की जेल (यानी महिला जेलों को छोड़कर) 21,192 थी।

इन जेलों में महिला कैदियों की वास्तविक संख्या 16,261 थी।

(अधिभोग दर: 76.7 %) 31 दिसंबर, 2019 तक।

17.उत्तराखंड ने सबसे अधिक महिला अधिभोग दर दर्ज की है

(170.1 %) इसके बाद छत्तीसगढ़ (136.1%) और उत्तर प्रदेश का स्थान है।

(127.3 %) . हालाँकि, महिला कैदियों की संख्या सबसे अधिक थी

उत्तर प्रदेश (4,174) और उसके बाद मध्य प्रदेश की जेलों में बंद प्रदेश (1,758) और महाराष्ट्र (1,569)।

कैदी-प्रकार और जनसांख्यिकी

अन्य कुल सं. की विचाराधीन सं. की सं. कैदियों का

दोषियों की संख्या

वर्ष

कैदी

कैदियों को हिरासत में लिया

2017

2,136

1,39,149

693

3,08,718

4,5

0,696

675

4,6

6,084

2018 1,39,488

3,23,537

2,384

2019

1,44,125

3,30,487

4,7

8,600

765

3,223

1. वर्ष 2019 के दौरान कुल 18,86,092 कैदियों को भर्ती किया गया था।

देश की विभिन्न जेलों में।

2. 31 दिसंबर, 2019 तक कुल (4,78,600) कैदी थे

देश भर की विभिन्न जेलों में बंद।

गौतम नवलखा की संख्या v. राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

1,44,125 , 3,30,487 और 3,223 क्रमशः 2019 के अंत में 30.11%, 69.05% और 0.67% के लिए जिम्मेदार हैं। कुल कैदियों में अन्य कैदियों की हिस्सेदारी 0.20% (765 कैदी) थी। 3. दोषी ठहराए गए कैदी

ए। दोषी ठहराए गए कैदियों की संख्या 2018 में 1,39,488 से बढ़कर 2019 में 1,44,125 हो गई है (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को), इस अवधि के दौरान 3.32% की वृद्धि हुई है।

बी। 31 दिसंबर, 2019 तक कुल आई. डी. 2 दोषियों में से, सबसे अधिक दोषी कैदी केंद्रीय जेलों (आई. डी. 3), 95,470 दोषियों), इसके बाद जिला जेलों (आई. डी. 1,38,846 दोषियों) और खुली जेलों (3 प्रतिशत, 4,288 दोषियों) में बंद थे।

सी। 2019 के अंत में देश में सबसे अधिक 27,612 दोषी उत्तर प्रदेश में दर्ज किए गए हैं, इसके बाद मध्य प्रदेश (20,253 दोषी) और महाराष्ट्र (6.3 प्रतिशत, 9,096 दोषी) हैं।

डी। 1,44,125 दोषियों में से 325 दीवानी दोषी थे।

4. विचाराधीन कैदी ए। विचाराधीन कैदियों की संख्या 2018 में 3,23,537 से बढ़कर 2019 में 3,30,487 हो गई है (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को), इस अवधि के दौरान 2.15% की वृद्धि हुई है।

बी। 31 दिसंबर, 2019 तक विचाराधीन कैदियों में सबसे अधिक विचाराधीन कैदी जिला जेलों (50.5%, 1,66,917 विचाराधीन) में बंद थे, इसके बाद केंद्रीय जेलों (36.7%, 1,21,342 विचाराधीन) और उप जेलों (10.6%, 35,059 विचाराधीन) में बंद थे।

सी। उत्तर प्रदेश में देश में विचाराधीन कैदियों की अधिकतम संख्या (73,418 विचाराधीन कैदी) दर्ज की गई है, इसके बाद बिहार (9.5 प्रतिशत, 31,275 विचाराधीन कैदी) और महाराष्ट्र (8.3 प्रतिशत, 27,557 विचाराधीन कैदी) का स्थान है।

2019 के अंत में।

डी। विचाराधीन कैदियों में से केवल 91 सिविल कैदी थे।

एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

5. गिरफ्तारियां ए। बंदियों की संख्या 2018 में 2,384 से बढ़कर 2019 में 3,223 हो गई है (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को), इस अवधि के दौरान 35.19% की वृद्धि हुई है।

बी। 31 दिसंबर, 2019 तक 3,223 बंदियों में से सबसे अधिक बंदियों को केंद्रीय जेलों (2,622 बंदियों) में रखा गया था, इसके बाद जिला जेलों (9.9 प्रतिशत, 318 बंदियों) और विशेष जेलों (6.1 प्रतिशत, 196 बंदियों) में रखा गया था।

6. बच्चों के साथ महिला कैदी ए। 31 दिसंबर, 2019 तक 1,779 बच्चों के साथ 1,543 महिला कैदी थीं।

बी। इन महिला कैदियों में से 1,212 महिला कैदी विचाराधीन कैदी थीं, जिनके साथ 1,409 बच्चे और 325 दोषी कैदी थे, जिनके साथ 363 बच्चे थे।

7. आयु-कैदियों का समूह

ए। 31 दिसंबर, 2019 तक कैदियों की अधिकतम संख्या (2,07,942 कैदी, 43.4%) 18-30 वर्ष आयु वर्ग के थे, इसके बाद 30-50 वर्ष आयु वर्ग (2,07,104 कैदी, 43.3%) के थे। बी। 63,336 कैदी (13.2%) 50 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के थे।

सी। 218 कैदी 16-18 वर्ष के आयु वर्ग के थे।

8. शिक्षा

ए। 4,78,600 कैदियों में, 1,98,872 की साक्षरता प्रोफ़ाइल

कैदियों के पास डिग्री थी, 8,085 (1.7%) कैदी स्नातकोत्तर थे और 5,677 (1.2%) कैदी तकनीकी डिप्लोमा/डिग्री धारक थे। बी। कुल 1,32,729 (27.7%) कैदी अनपढ़ थे।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

9. कैदियों की उत्पत्ति का अधिवास

ए। 31 दिसंबर, 2019 तक 4,78,600 कैदियों में से लगभग 90.8% (4,34,564 कैदी) राज्य के थे, इसके बाद अन्य राज्यों के कैदी (8 प्रतिशत, 38,428 कैदी) और दूसरे देश के कैदी (1.2 प्रतिशत, 5,608 कैदी) थे।

31 दिसंबर, 2019 तक दोषी (कुल 1,353 दोषी), उसके बाद दिल्ली (9.8 प्रतिशत, 855 दोषी) और महाराष्ट्र (9.2 प्रतिशत, 800 दोषी) हैं। डी। विचाराधीन कैदियों में से 90.2% (2,98,208 कैदी) राज्य के थे, जबकि 8.9% (29,300 कैदी) और 0.9% (2,979 कैदी) क्रमशः अन्य राज्यों और अन्य देशों के थे।

ई. महाराष्ट्र में अन्य राज्यों के विचाराधीन कैदियों (4,675 कैदी) की संख्या सबसे अधिक है, इसके बाद उत्तर प्रदेश (3,470 कैदी) और दिल्ली (3,453 कैदी) का स्थान है।

2019 के अंत में।

नं. के अंत में जेलों की संख्या।

विदेशी कैदियों का विदेशी हिस्सा

वर्ष

कैदी

4,917

4,50,696

1.1 %

1.1 %

4,66,084

5,168

1.2 %

4,78,600

5,608

1. विदेशी राष्ट्रीयता के कैदियों की संख्या (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर को) 2018 में 5,168 से बढ़कर 2019 में 5,608 हो गई है, जो इस अवधि के दौरान 8.51% बढ़ गई है। 2. कुल

कैदियों में से विदेशी कैदियों की प्रतिशत हिस्सेदारी 2018 में 1.1% से बढ़कर 2019 में 1.2% (प्रत्येक वर्ष 31 दिसंबर तक) हो गई है।

3. 2019 के अंत में विदेशी राष्ट्रीयता के 5,608 कैदियों में से 4,776 पुरुष और 832 महिलाएँ थीं।

एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

4. इन विदेशी राष्ट्रीय कैदियों में, 38.7% (2,171 कैदी) दोषी थे, 53.1% (2,979 कैदी) विचाराधीन कैदी थे और 0.7%

(40 कैदी) बंदी थे।

5. विदेशी दोषियों में, सबसे अधिक संख्या में विदेशी

दोषी बांग्लादेश (67.7%, 1,470 दोषी) के थे, इसके बाद नेपाल (10.5%, 228 दोषी) और म्यांमार (7.1%, 155 दोषी) के थे।

2019 के अंत में। जेल-बजट और बुनियादी ढांचा

1. सभी जेलों के लिए वित्तीय वर्ष का कुल बजट 2019-20

देश 6818.1 करोड़ था। वास्तविक व्यय था "

5958.3 करोड़ जो वित्त वर्ष 2019 के कुल वार्षिक बजट का 87.39% है

20 .

2. वित्त वर्ष के दौरान कैदियों पर कुल 6 करोड़ रुपये खर्च किए गए

2019-20 जो वित्त वर्ष 2019-20 के लिए सभी जेलों के कुल वार्षिक व्यय का लगभग 34.59% है।

3. कैदियों पर कुल खर्च का लगभग 47.9% (986.18 करोड़) भोजन पर 4% (* 89.48 करोड़) चिकित्सा मामलों पर, 1% (20.27 करोड़) कल्याणकारी गतिविधियों पर, 1% (* 22.56 करोड़) कपड़ों पर और 1.2% (24.20 करोड़) व्यावसायिक पर खर्च किए गए।

शैक्षिक प्रशिक्षण।

4. सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में, कुल खर्च में से, हरियाणा ने कैदियों पर खर्च का सबसे अधिक हिस्सा (100.0%, 272.62 करोड़) खर्च किया है, इसके बाद आंध्र प्रदेश (88.1%, '152.24) है।

करोड़) और दिल्ली (66.2%, ĺ 310.02 करोड़) वित्तीय वर्ष 2019-20 के दौरान।

5. 1, 350 जेलों में से 269 जेलों का नवीनीकरण/विस्तार किया गया था।

2019 के दौरान। 6. 1, 350 जेलों में से 808 जेलों में वीडियो थे।

31 दिसंबर 2019 तक सम्मेलन सुविधा।

7. वास्तविक तिमाही के मुकाबले कुल 33,537 तिमाही उपलब्ध थीं। 31 दिसंबर, 2019 तक कर्मचारियों की संख्या 60,787 थी।

48. नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स एयू (एन. सी. आर. बी.) द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार जेलों और कैदियों से संबंधित शर्तें उचित हैं।

आईएनजी। वर्ष गौतम नवलखा बनाम तक कुल 1350 जेलें थीं।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

49. कार्यकारी सारांश के अवलोकन से जहां तक अधिभोग दर का संबंध है, एक खतरनाक स्थिति का पता चलेगा। यह 2019 में 31 दिसंबर तक बढ़कर 118.5 प्रतिशत हो गया है। पुरुष कैदियों के लिए रहने की दर चिंताजनक है। वास्तव में, 2019 के दौरान, कुल 18,86,092 कैदियों को जेलों में भर्ती कराया गया था। 31 दिसंबर, 2019 तक 4,78,600 कैदियों का आंकड़ा स्पष्ट रूप से उन कैदियों की संख्या पर विचार करने के बाद है जिन्हें अन्य बातों के साथ-साथ जमानत पर रिहा किया जा सकता था। 2019 में विचाराधीन कैदियों की संख्या 3,30,487 थी जो वास्तव में कुल संख्या का 69.05 प्रतिशत थी। कैदियों का। दिल्ली में सबसे अधिक आबादी थी। 174.9 प्रतिशत की दर के साथ उत्तर प्रदेश दूसरे स्थान पर रहा जो 167.9 प्रतिशत के साथ दूसरे स्थान पर रहा। इसका मतलब यह है कि दिल्ली में एक जेल, जिसमें 100 लोग रहने वाले थे, का उपयोग 174 लोगों को रखने के लिए किया जाता था। हम इस तथ्य से भी अनजान नहीं हो सकते हैं कि आंकड़े दर्शाते हैं

आधिकारिक संस्करण। 50. भारत में जेलों में भारी भीड़ है। निश्चित रूप से, एक बहुत बड़ी राशि (रु। 6818.1 करोड़) जेलों पर बजट था। संभावनाओं के संदर्भ में दोनों पहलू प्रासंगिक हैं।

गिरफ्तारी का प्रस्ताव।

51. अनुच्छेद 19 के तहत नागरिकों को प्रदान किए गए अधिकारों के संदर्भ में, जो अनिवार्य रूप से संवैधानिक स्वतंत्रताएं हैं या बल्कि गणना किए गए अधिकार हैं, जैसा कि इस न्यायालय ने मेनका गांधी बनाम भारत संघ में समझाया है, 3 जब किसी नागरिक को नजरबंद रखा जाता है, जिसका प्रभाव उसे किसी भी स्वतंत्रता से वंचित करने का होता है, तो यह न केवल हिरासत होगी, बल्कि इसमें शामिल होंगे।

हिरासत में लिए गए नागरिकों को मौलिक स्वतंत्रताओं से वंचित करना जब तक कि ऐसी स्वतंत्रताओं को विशेष रूप से संरक्षित नहीं किया जाता है। एक व्यक्ति के पास एक मौलिक है देश के किसी भी हिस्से में जाने का अधिकार। यह स्पष्ट है कि एक व्यक्ति के मामले में एक नजरबंदी से गुजर रहा है और एक पूर्ण के दांतों में

निषेध, अपीलार्थी को अपने घर से बाहर जाने से मना करने वाले मामले के तथ्यों में, कारावास के मामले में वर्णित अभिरक्षा की पहचान समान रूप से मौजूद है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता शायद सबसे अधिक है।

संविधान के तहत मान्यता प्राप्त सभी मूल्यों का महत्व। यह है कि

किसी भी अतिक्रमण से ईर्ष्या से सुरक्षित रहें, सिवाय इसके कि जहां इस तरह की घुसपैठ को कानून की स्पष्ट मंजूरी हो। द्वारा स्थापित "प्रक्रिया" अभिव्यक्ति

21] 5 एस सी आर।

मेनका गांधी (ऊपर) से शुरू होने वाले इस न्यायालय के फैसलों में कानून को व्यापक और उदार व्याख्या मिली है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार प्रत्येक मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। अनुच्छेद 21 के तहत अधिकार निस्संदेह नागरिकों और गैर-नागरिकों के लिए उपलब्ध है। जबकि व्यक्तिगत स्वतंत्रता एक व्यापक अभिव्यक्ति है जो अपने दायरे में शामिल करने में सक्षम है, किसी व्यक्ति पर लगाए गए सभी प्रकार के प्रतिबंधों से स्वतंत्रता के अर्थ में स्वतंत्रता से वंचित होने के खिलाफ संरक्षित होने के अधिकार के अलावा कई तत्व, व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अपरिवर्तनीय मूल में, निस्संदेह, जबरन हिरासत में रहने के खिलाफ स्वतंत्रता शामिल है।

52. यहाँ हम नकारात्मक स्वतंत्रता की अवधारणा को ध्यान में रखते हैं। यशैया बर्लिन के प्रसिद्ध व्याख्यान, "टू कॉन्सेप्ट्स ऑफ लिबर्टी" में, वे अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार कहते हैं:

" 'नकारात्मक' स्वतंत्रता की धारणा

आम तौर पर मुझे इस हद तक स्वतंत्र कहा जाता है कि कोई भी इंसान मेरी गतिविधि में हस्तक्षेप नहीं करता है। इस अर्थ में राजनीतिक स्वतंत्रता केवल वह क्षेत्र है जिसके भीतर एक आदमी वह कर सकता है जो वह चाहता है। यदि मुझे अन्य व्यक्तियों द्वारा वह करने से रोका जाता है जो मैं चाहता हूं तो मैं उस हद तक स्वतंत्र नहीं हूं; और यदि जिस क्षेत्र के भीतर मैं वह कर सकता हूं जो मैं चाहता हूं वह अन्य पुरुषों द्वारा एक निश्चित न्यूनतम से अधिक अनुबंध किया जाता है, तो मुझे मजबूर किया जा सकता है, या, हो सकता है, गुलाम बनाया जा सकता है। हालाँकि, जबरदस्ती न करना एक ऐसा शब्द है जो हर प्रकार की अक्षमता को शामिल करता है। अगर मैं कहता हूं कि मैं हवा में 10 फीट से अधिक कूदने में असमर्थ हूं, या पढ़ नहीं सकता क्योंकि मैं अंधा हूं या हेगेल के गहरे पन्नों को नहीं समझ सकता, तो यह कहना अजीब होगा कि मैं उस पर हूं।

डिग्री गुलाम या मजबूर। जबरदस्ती का तात्पर्य उस क्षेत्र में अन्य मनुष्यों के जानबूझकर हस्तक्षेप से है जिसमें मैं कार्य करना चाहता हूं। आपको राजनीतिक स्वतंत्रता या स्वतंत्रता की कमी केवल तभी होती है जब आपको मनुष्यों द्वारा अपने लक्षय को प्राप्त करने से रोका जाता है। अपने लक्षय को प्राप्त करने में केवल असमर्थता राजनीतिक स्वतंत्रता की कमी नहीं है। यह इसे 'आर्थिक स्वतंत्रता' और इसके समकक्ष, 'आर्थिक गुलामी' जैसी आधुनिक अभिव्यक्तियों के उपयोग से सामने लाया गया है। बहुत ही तर्कसंगत रूप से यह तर्क दिया जाता है कि यदि कोई व्यक्ति ऐसा कुछ खरीदने के लिए बहुत गरीब है जिस पर कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं है-रोटी की एक रोटी, दुनिया भर की यात्रा, कानूनी अदालतों का सहारा लेना-तो वह इसे रखने के लिए उतना ही कम स्वतंत्र है जितना कि अगर उसे कानून द्वारा वर्जित किया जाता तो वह होता। अगर मेरी गरीबी होती

एक प्रकार की बीमारी, जो मुझे रोटी खरीदने या दुनिया भर की यात्रा के लिए भुगतान करने, या मेरे मामले की सुनवाई करने से रोकती थी, क्योंकि लंगड़ापन मुझे भागने से रोकता है, यह अक्षमता गौतम नवलखा बनाम नहीं होगी।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

स्वाभाविक रूप से स्वतंत्रता की कमी के रूप में वर्णित किया जाए, कम से कम सभी राजनीतिक स्वतंत्रता की। यह केवल इसलिए है क्योंकि मेरा मानना है कि मैं जो चाहता हूं उसे प्राप्त करने में मेरी असमर्थता इस तथ्य के कारण है कि अन्य मनुष्यों ने व्यवस्था की है जिससे मैं हूं, जबकि अन्य लोगों को इसके लिए भुगतान करने के लिए पर्याप्त धन से रोका नहीं जाता है, कि मैं खुद को जबरदस्ती या गुलामी का शिकार मानता हूं। दूसरे शब्दों में, इस शब्द का उपयोग मेरी गरीबी या कमजोरी के कारणों के बारे में एक विशेष सामाजिक और आर्थिक सिद्धांत पर निर्भर करता है। अगर मेरे साधनों की कमी मेरे मानसिक या शारीरिक क्षमता की कमी के कारण है, तो मैं स्वतंत्रता से वंचित होने की बात करना शुरू कर देता हूं (और केवल स्वतंत्रता से नहीं)। गरीबी) केवल तभी जब मैं सिद्धांत को स्वीकार करता हूँ। अगर, इसके अलावा, मुझे लगता है कि मुझे एक निश्चित व्यवस्था द्वारा अभाव में रखा जा रहा है जिसे मैं अन्यायपूर्ण या अनुचित मानता हूं, तो मैं आर्थिक गुलामी या उत्पीड़न की बात करता हूं। चीजों की प्रकृति हमें पागल नहीं करती है, केवल दुर्भावना करती है ", रूसो ने कहा। उत्पीड़न का मानदंड वह हिस्सा है जिसे मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्य मनुष्यों द्वारा मेरी इच्छाओं को विफल करने में खेला जाता है। इस मायने में स्वतंत्र होने से मेरा मतलब है कि दूसरों द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना। हस्तक्षेप न करने का क्षेत्र जितना व्यापक होगा, मेरी स्वतंत्रता उतनी ही व्यापक होगी।

53. वास्तव में, व्यक्तिगत स्वतंत्रता स्वयं जीवन के अधिकार से जुड़ी हुई है। यह एक अविभाज्य हिस्सा है जिसके बिना जीवन के अधिकार से वंचित है। इसकी सामग्री और अर्थ। जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार है

अनिवार्य रूप से इस सिद्धांत पर भी आधारित है कि मौलिक अधिकारों के संबंध में पुरुषों के साथ समान व्यवहार किया जाए और कोई भी व्यक्ति या पुरुषों का एक समूह, यहां तक कि एक राज्य के रूप में संगठित हो, जिसके तहत वह रहता है, उसे समान व्यवहार के अधिकार का उल्लंघन किए बिना वंचित नहीं कर सकता है, जब तक कि कानून की वैध मंजूरी न हो। इसके सदस्यों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता किसी भी सभ्य राज्य का सबसे पोषित लक्षय बना रहना चाहिए और इसके साथ इसका हस्तक्षेप उन मामलों तक सीमित होना चाहिए जहां इसे कानून द्वारा स्वीकृत किया गया है और वास्तव में इसकी आवश्यकता है। अदालत इस बहुमूल्य को बरकरार रखने के पक्ष में होगी,

54. हमने देखा है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में आम तौर पर, नजरबंदी एक दोषसिद्धि का अनुसरण करती है और एक विकल्प है जो उपलब्ध है अदालतें किसी व्यक्ति को नजरबंदी में भेजती हैं जो जेल की सजा के बदले में होती है।

55. हम इस अवसर का उपयोग श्री के तर्क को प्रतिध्वनित करने के लिए करेंगे। कपिल

सिब्बल, अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील ने कहा कि किसी भी न्यायालय के पास किसी भी व्यक्ति को उसके अधिकार से वंचित करने की कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं है, भले ही वह उच्च न्यायालय हो। उसे नजरबंद करके व्यक्तिगत स्वतंत्रता। एक व्यक्ति को [2021] 5 एस. सी. आर. में रखना।

अभिरक्षा उसे उसके अधिकारों से वंचित करती है जिसमें उसका मौलिक अधिकार भी शामिल होगा। अधिकार जो वह कार्यकाल को प्रभावी बनाने पर वंचित रहेगा

नजरबंदी, एक पूरी तरह से अवैध कवायद होगी, अगर यह इस तथ्य के लिए नहीं होता कि उच्च न्यायालय को Cr.P.C की धारा 167 के तहत एक न्यायाधीश को उपलब्ध शक्तियों का प्रयोग करने के रूप में माना जाना चाहिए। इस प्रकार, तर्क चलता है।

मामले में किसी व्यक्ति के लिए भुगतान खुला रहता है

CR.P.C की धारा 167 के तहत माँग।

56. राज्य प्रतिनिधि में। पुलिस निरीक्षक और अन्य बनाम। एन. एम. टी. जॉय इममक्युलेट ', 3 विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने रिमांड के आदेश के खिलाफ आई. डी. 1 की धारा 397 के तहत संशोधन की स्थिरता के सवाल पर विचार किया। हम पैरा 13 पर ध्यान देते हैं जो इस प्रकार है:

जब जाँच या मुक़दमे को स्थगित करना आवश्यक हो तो मुक़दमा शुरू करना। रिमांड के आदेश का मुकदमे की कार्यवाही पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और न ही इसका मामले के अंतिम निर्णय पर कोई प्रभाव पड़ सकता है। यदि रिमांड का आदेश अवैध पाया जाता है, तो इसके परिणामस्वरूप आरोपी को बरी नहीं किया जा सकता है या कार्यवाही समाप्त नहीं की जा सकती है। रिमांड आदेश मुकदमे की प्रगति या उसके निर्णय को किसी भी तरह से प्रभावित नहीं कर सकता है। इसलिए, मधु लिमये मामले [(1977) 4 एस. सी. सी. 551 में निर्धारित परीक्षण को लागू करना: 1978 एससीसी (सीआरआई) 10: ए. आई. आर. 1978 एस. सी. 47] इसे "मध्यवर्ती क्रम" के रूप में भी वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। इसलिए यह आदेश शुद्ध और सरल है। अंतर्वर्ती आदेश और धारा 397 Cr.P.C की उप-धारा (2) द्वारा बनाए गए प्रतिबंध को देखते हुए, उक्त आदेश के खिलाफ एक संशोधन बनाए रखने योग्य नहीं है। इसलिए, उच्च न्यायालय ने मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त जॉय इममक्युलेट को पुलिस हिरासत में देने के आदेश के खिलाफ संशोधन पर विचार करने में गलती की।

एक दिन के लिए।

9 9 (2004) 5 एस. सी. सी. 729 गौतम नवलखा बनाम।

57. इस प्रकार, धारा 167 के तहत एक आदेश विशुद्ध रूप से एक अंतर्वर्ती है

आदेश दें। कोई संशोधन बनाए रखने योग्य नहीं है। धारा 482 के तहत याचिका को खारिज नहीं किया जा सकता है। अब इस मोड़ पर हमें निम्नलिखित आयाम पर ध्यान देना चाहिए। जब गैर-जमानती अपराध में गिरफ्तार किया गया कोई व्यक्ति हिरासत में है, तो उसमें निहित प्रतिबंधों के अधीन, उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय के अलावा कोई अन्य अदालत, जिसके समक्ष उसे लाया जाता है, उसे Cr.P.C की धारा 437 के तहत जमानत पर रिहा कर सकती है। Cr.P.C की धारा 439. हिरासत में किसी व्यक्ति को जमानत देने के लिए उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय की विशेष शक्तियों से संबंधित है। उक्त अदालतें मजिस्ट्रेट के आदेश में किसी भी शर्त को दरकिनार या संशोधित भी कर सकती हैं।

58. केंद्रीय जांच ब्यूरो में, विशेष जांच

सेल वी। अनुपम जे. कुलकर्णी 1 हम निम्नलिखित कथन को देख सकते हैं:

" अब धारा 167 के उद्देश्य और दायरे पर आते हुए यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि यह धारा 57 का पूरक है। धारा 57 से यह स्पष्ट है कि जांच पहली बार में 24 घंटे के भीतर पूरी की जानी चाहिए; यदि नहीं तो गिरफ्तार व्यक्ति को पुलिस द्वारा मजिस्ट्रेट के सामने लाया जाना चाहिए जैसा कि धारा 167 के तहत प्रावधान किया गया है। कानून एक पुलिस अधिकारी को गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट अदालत तक की यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में रखने के लिए अधिकृत नहीं करता है। धारा 167 की उप-धारा (1) में यह सारी प्रक्रिया शामिल है और यह भी कहा गया है कि पुलिस अधिकारी को आरोपी को निकटतम मजिस्ट्रेट को भेजते समय मामले से संबंधित डायरी में प्रविष्टियों की एक प्रति भी प्रेषित करनी चाहिए। डायरी में प्रविष्टियाँ मजिस्ट्रेट को आवश्यक जानकारी देने के लिए होती हैं, जिसके आधार पर वह निर्णय ले सकता है कि आरोपी को आगे हिरासत में रखा जाना चाहिए या नहीं। यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस स्तर पर भी मजिस्ट्रेट उसे जमानत पर रिहा कर सकता है यदि कोई आवेदन किया जाता है और यदि वह संतुष्ट है कि उसे हिरासत में भेजने का कोई आधार नहीं है, लेकिन यदि वह संतुष्ट है कि आगे रिमांड की आवश्यकता है तो उसे धारा 167 के तहत प्रदान किए गए अनुसार कार्य करना चाहिए।

59. इस प्रकार, आम तौर पर, जब अदालत रिमांड के अनुरोध पर विचार करती है तो जमानत के लिए एक आवेदन होगा। जमानत देना अदालत का काम है।

ऐसा न करने पर रिमांड का आदेश जारी किया जाएगा। 60. इसमें कोई संदेह नहीं है कि रिमांड रिपोर्ट पर मजिस्ट्रेट द्वारा विचार किया जाता है, लेकिन जमानत के लिए आवेदन धारा 439 के तहत दायर किया जा सकता है।

इसमें निहित प्रतिबंधों को देखते हुए धारा 437 के तहत आगे बढ़ने के बजाय। हालाँकि धारा 397 के तहत एक आवेदन रिमांड के खिलाफ नहीं होगा, जैसा कि पहले ही देखा गया है, जमानत के लिए एक आवेदन धारा 439 के तहत होगा। इसलिए, आम तौर पर अभियुक्त जमानत और वैधता की मांग करेगा और धारा 439 के तहत एक आवेदन में उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा रिमांड की आवश्यकता पर भी विचार किया जाएगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यूएपीए की धारा 43 (डी) (5) के तहत अतिरिक्त प्रतिबंध लागू हैं।

उक्त कानून के तहत मामलों में भारत के नागरिकों को।

हैबियस कॉर्पस झूठ का एक लेख भी

अनुभाग के तहत माँग का आदेश (167)

OF CR.P.C।

61. बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका अवैध निरोध के मामले में निवारण की मांग करने वाली याचिका है। इसका उद्देश्य सबसे त्वरित उपचार होना है स्वतंत्रता दांव पर है। जब किसी व्यक्ति को न्यायिक हिरासत में भेजा जाता है या पुलिस हिरासत में भेजा जाता है, तो क्या बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका निहित होती है, यह समग्र नहीं है। हम इस न्यायालय के केवल दो निर्णयों पर ध्यान दे सकते हैं। मनुभाई रतिलाल पटेल बनाम। गुजरात राज्य और अन्य, 1 "। हम पैराग्राफ 24 देख सकते हैं।

" (24) अभियुक्त के रिमांड का निर्देश देने का कार्य मूल रूप से एक न्यायिक कार्य है। मजिस्ट्रेट कार्यपालिका में कार्य नहीं करता है।

अभियुक्त के निरोध का आदेश देते समय क्षमता। जबकि इस न्यायिक अधिनियम का प्रयोग करते हुए, मजिस्ट्रेट की ओर से खुद को संतुष्ट करना अनिवार्य है कि क्या उसके सामने रखी गई सामग्री इस तरह के रिमांड को उचित ठहराती है या, इसे अलग तरीके से रखने के लिए, क्या आरोपी को हिरासत में लेने और उसकी रिमांड बढ़ाने के लिए उचित आधार मौजूद हैं। धारा 167 के तहत रिमांड का उद्देश्य यह है कि जांच 24 घंटे के भीतर पूरी नहीं की जा सकती है। यह मजिस्ट्रेट को यह देखने में सक्षम बनाता है कि रिमांड वास्तव में आवश्यक है। इसके लिए जांच एजेंसी को रिमांड रिपोर्ट के साथ केस डायरी भेजने की आवश्यकता होती है ताकि मजिस्ट्रेट तथ्यात्मक परिदृश्य को समझ सके और अपने दिमाग को लागू कर सके कि क्या पुलिस रिमांड के लिए वारंट है या न्यायिक रिमांड के लिए औचित्य है या किसी भी रिमांड की कोई आवश्यकता नहीं है। मजिस्ट्रेट की ओर से यह अनिवार्य है कि वह अपना दिमाग लगाए और कोई आदेश पारित न करे।

स्वतः या यांत्रिक तरीके से रिमांड का "।

तथापि, न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में भी अभिनिर्धारित कियाः

1 1 11 (2013) 1 एस. सी. सी. 314 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

" 31. यह सर्वविदित सिद्धांत है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण के एक रिट पर तब विचार नहीं किया जाना चाहिए जब कोई व्यक्ति किसी आदेश द्वारा सक्षम अदालत द्वारा न्यायिक हिरासत या पुलिस हिरासत के लिए प्रतिबद्ध हो, जो प्रथम दृष्टया अधिकार क्षेत्र के बिना प्रतीत नहीं होता है या पूरी तरह से यांत्रिक तरीके से या पूरी तरह से अवैध रूप से पारित नहीं होता है। जैसा कि बी. रामचंद्र राव [(1972) 3 एस. सी. सी. 256 में कहा गया है: 1972 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 481: ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 2197] और कानू सान्याल [(1974) 4 एस. सी. सी. 141: 1974 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 280], अदालत को हिरासत के आदेश की वैधता या अन्यथा जांच करने की आवश्यकता है जो पारित किया गया है।

जब तक कि अदालत संतुष्ट न हो कि कोई व्यक्ति एक आदेश के आधार पर जेल हिरासत के लिए प्रतिबद्ध है जो कमी के दुष्प्रभाव से ग्रस्त है।

अधिकारिता या पूर्ण अवैधता का, बंदी प्रत्यक्षीकरण का एक रिट नहीं हो सकता है

दिया जाए "।

62. हम में से एक (यू. यू. ललित, जे.) ने गंभीर धोखाधड़ी के फैसले में दो की पीठ की ओर से बोलते हुए उपरोक्त विचार का पालन किया जाँच कार्यालय और अन्य। बनाम राहुल मोदी और Ors.[1][2] और निम्नलिखित रूप में आयोजित:

" (21) अत: अभियुक्त के रिमांड का निर्देश देने का कार्य एक न्यायिक कार्य माना जाता है और रिमांड के आदेश को चुनौती नहीं दी जाती है।

बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका में विचार किया जाए "।

हम उसी निर्णय के अनुच्छेद 19 पर भी ध्यान दे सकते हैं।

" (19) इस प्रकार कानून स्पष्ट है कि "बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही में ए

अदालत को वापसी के समय हिरासत की वैधता या अन्यथा को ध्यान में रखना चाहिए, न कि कार्यवाही की स्थापना के संदर्भ में।

63. इस प्रकार, हम निम्नलिखित मानेंगे:

यदि रिमांड पूरी तरह से अवैध है या रिमांड अधिकार क्षेत्र की कमी से पीड़ित है, तो एक बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका वास्तव में होगी।

झूठ बोलते हैं। समान रूप से, यदि रिमांड का आदेश पूरी तरह से यांत्रिक तरीके से पारित किया जाता है, तो प्रभावित व्यक्ति बंदी प्रत्यक्षीकरण का उपचार ले सकता है। ऐसी स्थितियों को छोड़कर, बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका झूठ नहीं बोलेगी।

न्यायालय) CR.P.C की धारा (167) के तहत शक्ति का उपयोग कर सकता है। क्या डीफाल्ट बेल के उद्देश्य के लिए ग्राहक देश के नियमों को तोड़ा जा सकता है?

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

64. उठाए गए तर्कों में से एक यह है कि द्वारा पारित आदेश

दिल्ली उच्च न्यायालय, Cr.P.C की धारा 167 के तहत पारित नहीं है, इस कारण से कि Cr.P.C जिस पर विचार करता है वह एक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश है। इसलिए इस बात पर विचार करना आवश्यक हो जाता है कि क्या मजिस्ट्रेट के अलावा कोई अन्य अदालत धारा 167 के तहत रिमांड का आदेश दे सकती है। सबसे पहले, धारा 167 में उपयोग किए गए शब्दों के अनुसार, क्या है?

विचार किया जाता है कि मजिस्ट्रेट धारा 167 (2) के तहत रिमांड का आदेश देता है। 65. बहरहाल, आइए हम इस मुद्दे पर थोड़ा और गौर करें। आइए हम एक ऐसे मामले को लें जहां एक मजिस्ट्रेट धारा 167 के तहत रिमांड का आदेश देता है और

उसी समय, वह अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत जमानत के आवेदन को भी अस्वीकार कर देता है। आरोपी Cr.P.C की धारा 439 के तहत उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है। अदालत आदेश को उलट देती है और उसे जमानत दे देती है। जिस अभियुक्त को हिरासत में भेजा गया था, उसका मतलब है कि पुलिस हिरासत या न्यायिक हिरासत को उसकी हिरासत से बाहर लाया जाता है और उच्च न्यायालय के आदेश का पालन करते हुए उसे जमानत पर रिहा कर दिया जाता है। इस आदेश को शीर्ष अदालत में चुनौती दी गई है। सर्वोच्च न्यायालय जमानत देने के आदेश को पलट देता है। मजिस्ट्रेट द्वारा पारित मूल आदेश को पुनर्जीवित किया जाता है। यह स्पष्ट है कि आरोपी वापस हिरासत में चला जाता है। चूंकि यह मानते हुए कि 15 दिनों की अवधि समाप्त हो गई है और पुलिस हिरासत की अनुमति नहीं है, उसे वापस न्यायिक हिरासत में भेज दिया जाता है। समान रूप से यदि वह पहले से ही न्यायिक हिरासत में था, तो न्यायिक हिरासत देने वाले आदेश को पुनर्जीवित किया जाता है। आइए हम चित्रण में मान लें कि अभियुक्त केवल 10 दिनों की अवधि के लिए हिरासत में था और इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के बाद और अभियुक्त जिसने और 80 दिन बिताए, वह दूसरे शब्दों में, हिरासत की अवधि को जोड़ते हुए कुल 90 दिनों की हिरासत की अवधि पूरी करता है, जिसके परिणामस्वरूप उसे मजिस्ट्रेट द्वारा रिमांड का सामना करना पड़ा। अर्थात् अभिरक्षा की इन टूटी हुई अवधियों को जोड़कर, अभियुक्त को डिफ़ॉल्ट जमानत का हकदार बनाने के लिए 90 दिनों की वैधानिक अवधि तक पहुँच जाता है। क्या यह कहा जा सकता है कि अभिरक्षा देने वाले इस न्यायालय के आदेश को 90 दिनों की अवधि की गणना के लिए विचार में नहीं लिया जाना चाहिए, जिसके पूरा होने पर अभियुक्त डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए मामला स्थापित कर सकता है। हम सोचेंगे कि केवल तथ्य यह है कि यह सर्वोच्च न्यायालय है जिसने रिमांड की शक्ति का प्रयोग किया, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा चित्रण में गलत तरीके से सराहा गया था, धारा 167 के तहत अधिकृत हिरासत से विचलित नहीं होगा। 66. आइए एक और उदाहरण लेते हैं। शुरू में 15 दिनों की अवधि के लिए रिमांड का आदेश देने के बाद, जिसमें से 10 दिन पुलिस हिरासत और 5 दिन न्यायिक हिरासत के माध्यम से होता है, मजिस्ट्रेट एक आरोपी को जमानत पर बढ़ा देता है। उच्च न्यायालय इस आधार पर जमानत देने के आदेश में हस्तक्षेप करता है कि जमानत नहीं दी जानी चाहिए थी। परिणामस्वरूप, व्यक्ति गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय अनुसंधान

एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

जो जमानत के आदेश के आधार पर जेल की हिरासत से बाहर आया है, उसे रखा जाता है

न्यायिक हिरासत या जेल हिरासत में वापस। यह आदेश उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा अभिरक्षा प्रदान करने वाले आदेश को ऐसा नहीं माना जा सकता है जो आई. डी. 1 की धारा 167 में निहित नहीं है। इसलिए, हम सोचेंगे कि यद्यपि मजिस्ट्रेट के पास उच्च न्यायालयों द्वारा प्रयोग की जाने वाली उचित अधिकारिता के माध्यम से रिमांड का आदेश देने की शक्ति निहित है, (इसमें, वास्तव में, धारा 439 के तहत कार्य करने वाला सत्र न्यायालय शामिल होगा) धारा 167 के तहत शक्ति का प्रयोग उन न्यायालयों द्वारा भी किया जा सकता है जो मजिस्ट्रेट से श्रेष्ठ हैं।

67. इसलिए, जबकि सामान्य रूप से, मजिस्ट्रेट मूल न्यायालय है जो धारा 167 के तहत रिमांड की शक्ति का प्रयोग करेगा,

उच्च न्यायालयों द्वारा शक्ति की जिसके परिणामस्वरूप अभिरक्षा होगी उच्च न्यायालय सहित उच्च न्यायालयों द्वारा सामान्य रूप से (पुलिस या न्यायिक अभिरक्षा) आदेश दिया जाना, वास्तव में उस अवधि की गणना करने के उद्देश्य से अभिरक्षा होगी जिसके भीतर आरोप पत्र दायर किया जाना चाहिए, जिसमें विफल रहने पर अभियुक्त चूक जमानत का वैधानिक अधिकार प्राप्त कर लेता है। हमारे पास है।

ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1506 (ऊपर) में इस न्यायालय की टिप्पणियों पर भी ध्यान दिया। ऐसी परिस्थितियों में अभिरक्षा की टूटी हुई अवधियों को गिना जा सकता है कि क्या अभिरक्षा मजिस्ट्रेट या उच्च न्यायालयों के आदेश से पीड़ित है, यदि अभिरक्षा के बाद जांच अधूरी रहती है, चाहे निरंतर या टूटी हुई अवधि एक साथ अपेक्षित अवधि तक पहुंच जाए; डिफ़ॉल्ट जमानत हिरासत में लिए गए व्यक्ति का अधिकार बन जाता है। 68. समान रूप से जब जमानत याचिका में कोई आदेश जारी किया जाता है, तो आरोपी को हिरासत में लेने के परिणामस्वरूप पारित आदेश एक वरिष्ठ अधिकारी द्वारा पारित किए जाते हैं।

अदालत धारा 167 के तहत होगी।

हस्तांतरण आदेश का प्रभाव? क्या यह ए है

उत्पाद आदेश धारा 167 CR.P.C के तहत स्रोत सोचा गया।

69. प्रत्यर्थी का तर्क है कि पारगमन रिमांड आदेश Cr.P.C की धारा 167 के तहत हिरासत के लिए रिमांड नहीं है, बल्कि केवल पेश करने के लिए है। रिलायंस को धारा 57 पर रखा गया है। दूसरे शब्दों में, यह इंगित किया गया है कि धारा 57 में विचार किया गया है कि धारा 167 के तहत 'विशेष आदेश' के अभाव में, वारंट के बिना गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान तक यात्रा के लिए लिए गए समय को छोड़कर 24 घंटे के भीतर पेश किया जाना चाहिए जहां मजिस्ट्रेट स्थित है।

इसलिए, यदि धारा 167 के तहत एक 'विशेष आदेश' प्राप्त किया जाता है, तो यह विस्तार के उद्देश्य से है।

धारा 57 में गिरफ्तार व्यक्ति को पेश करने का समय।

21] 5 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

70. इसके विपरीत, अपीलार्थी का तर्क है कि धारा 167 विशेष रूप से

इसमें ऐसे मामले शामिल हैं जहां एक न्यायिक मजिस्ट्रेट जिसके पास किसी मामले की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, वह रिमांड का आदेश दे सकता है। ट्रांजिट रिमांड का आदेश देने के लिए कोई अन्य प्रावधान नहीं है।

71. इस मामले में ट्रांजिट रिमांड का आदेश 28.08.2018 पर दिया गया था। अपीलार्थी को उसी के तहत 30.08.2018 पर पुणे में मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना था। एक व्यक्ति को भारत के किसी भी हिस्से में एक पुलिस अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किया जा सकता है (Cr.P.C की धारा 48)। धारा 56 के तहत बिना वारंट के गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के सामने या पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के सामने भेजा जाना है। इसके बाद, धारा 57 इस तरह से गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को मना करती है:

जो है उससे अधिक अवधि के लिए हिरासत में रखे जाने से

आई.

उचित है।

गिरफ्तारी के समय से 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में रखने से,

ii.

गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट न्यायालय तक की यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर।

72. अब, धारा 57 में निर्दिष्ट 'मजिस्ट्रेट न्यायालय' मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम मजिस्ट्रेट है। धारा 57 में धारा 167 के तहत 'विशेष आदेश' के अभाव में यात्रा की अवधि को छोड़कर 24 घंटे की अवकाश सीमा शामिल है। 73. 'विशेष आदेश' शब्द 'आई. डी. 1' की धारा 167 में नहीं पाए जाते हैं। इसलिए, क्या यह धारा 57 की अनुमति के अलावा नहीं कहा जा सकता है।

क्या यह कोई अन्य हिरासत है? क्या वैधानिक जमानत के लिए रिमांड की अवधि इस 'विशेष आदेश' की तारीख से शुरू होगी? क्या यह तभी शुरू होगा जब सक्षम मजिस्ट्रेट रिमांड का आदेश देंगे? 74. अब जहाँ तक इस मामले का संबंध है, हम दिल्ली उच्च न्यायालय के निष्कर्षों को इस प्रकार देखते हैं: (पैरा 11 और पैरा 15)

" (11) श्री नवारे ने इसके बाद एक मजिस्ट्रेट के कार्य के दायरे के बीच अंतर करने की कोशिश की, जिसके समक्ष पारगमन रिमांड के लिए एक आवेदन भेजा जाता है और अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट, जिनसे Cr.P.C की धारा 56 के संदर्भ में रिमांड के आदेश के लिए संपर्क किया जाना चाहिए। श्री नवारे के अनुसार, पारगमन के चरण में गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

रिमांड संबंधित मजिस्ट्रेट को संतुष्ट करने की आवश्यकता नहीं होगी स्वयं इससे अधिक कुछ नहीं कि क्या कोई अपराध बनाया गया है और क्या रिमांड की मांग करने वाला पुलिस अधिकारी वास्तव में वही है

ऐसा करने के लिए अधिकृत "।

" (15) इसलिए, जब कोई व्यक्ति जिसे गिरफ्तारी के बाद न्यायिक मजिस्ट्रेट के अधिकार क्षेत्र के समक्ष पेश करने की आवश्यकता होती है, उसे हिरासत में लिया जाता है।

वह स्थान जो उस अधिकार क्षेत्र से दूर है, और इसलिए 24 घंटे के भीतर अधिकार क्षेत्र मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश नहीं किया जा सकता है, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 22 (2) और धारा 57 Cr.P.C दोनों द्वारा अनिवार्य है, उसे डायरी में प्रविष्टियों की एक प्रति के साथ 'निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट' के समक्ष पेश किया जाएगा। इसलिए, एक मजिस्ट्रेट के समक्ष भी, जिसके समक्ष पारगमन रिमांड आवेदन दायर किया जाता है, धारा 167 (1) Cr.P.C की अनिवार्य आवश्यकता यह है कि केस डायरी में प्रविष्टियों की एक प्रति भी पेश की जानी चाहिए। यह उस आधार पर है कि धारा 167 (2) के तहत ऐसे 'निकटतम न्यायिक मजिस्ट्रेट' गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को पूरी तरह से 15 दिनों से अधिक की अवधि के लिए हिरासत में रखने का आदेश पारित करेंगे। जहां उसके पास मामले की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है और वह आगे हिरासत को अनावश्यक पाता है, वह आदेश दे सकता है

अभियुक्त को अधिकार क्षेत्र मजिस्ट्रेट के पास भेजा जाए। "

75. वास्तव में, जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है कि महाराष्ट्र राज्य का निवेदन यह भी था कि एक बार जब कोई व्यक्ति न्यायिक हिरासत में होता है तो बंदी प्रत्यक्षीकरण का एक रिट झूठ नहीं बोलता था जिसे भी खारिज कर दिया गया था।

76. अब यह सवाल बना रह सकता है कि ट्रांजिट रिमांड के अनुसार रिमांड पुलिस हिरासत में है या न्यायिक हिरासत में। यह न्यायिक हिरासत नहीं हो सकती क्योंकि पुलिस को विशेष रूप से उस व्यक्ति को अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने का काम सौंपा गया है। इसलिए यह पुलिस हिरासत है। क्या पुलिस के आधार पर आरोपी से पूछताछ करके मामले की पूछताछ/जांच में लगी रह सकती है?

पारगमन आदेश या तो यात्रा शुरू करने से पहले या यात्रा के दौरान और यात्रा के बाद उसे पेश करने से पहले? यदि यह सोचा जाता है कि यात्रा के दौरान यह अस्वीकार्य है, तो धारा 167 के तहत आदेश प्राप्त किए बिना अनुमति प्राप्त यात्रा के समय इस तरह की पूछताछ समान रूप से अस्वीकार्य होगी। यदि ऐसी यात्रा के दौरान भी आरोपी स्वयंसेवी बयान देते हैं जो अन्यथा साक्षय अधिनियम की धारा 27 के तहत आता है, तो यह तब होगा जब आरोपी पुलिस की हिरासत में होगा। यदि यह पुलिस हिरासत है, तो मजिस्ट्रेट का आदेश [2021] 5 एस. सी. आर. देता है।

पारगमन रिमांड डिफ़ॉल्ट जमानत के उद्देश्य के लिए अवधि को पूरा करने के लिए (1986) 3 एस. सी. सी. 141 के संदर्भ में समय निर्धारित करेगा।

77. हम यह भी देख सकते हैं कि चगंती सत्यनारायणा मामले में इस न्यायालय के फैसले में धारा 57 और 167 की परस्पर क्रिया पर विचार किया गया था।

(ऊपर)। यह इस प्रकार आयोजित किया गया था:

" (12) उप-धारा (1) और (2) को पढ़ने पर यह देखा जा सकता है कि उप-धारा (1) एक अनिवार्य प्रावधान है जो

पुलिस अधिकारी को ऐसा तब करना चाहिए जब किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया जाए और हिरासत में रखा जाए और ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 57 द्वारा निर्धारित 24 घंटे की अवधि के साथ जांच पूरी नहीं की जा सकती है। उप-खंड (2) दूसरी ओर यह मजिस्ट्रेट के लिए उपलब्ध रिमांड की शक्तियों और उस तरीके से संबंधित है जिसमें ऐसी शक्तियां होनी चाहिए:

व्यायाम किया। धारा 167 की उप-धारा (1) की शर्तों को धारा 57 के साथ पढ़ा जाना चाहिए। धारा 57 पुलिस को रोकती है।

बिना वारंट के किसी व्यक्ति को हिरासत में रखने से अधिकारी मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किए बिना 24 घंटे से अधिक की अवधि, इस अपवाद के अधीन कि प्रदर्शन करने के लिए लिया गया समय

गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट की अदालत तक की यात्रा को 24 घंटे की निर्धारित अवधि से बाहर रखा जा सकता है। चूंकि उप-धारा (1) में यह प्रावधान है कि यदि धारा 57 द्वारा निर्धारित 24 घंटे की अवधि के भीतर जांच पूरी नहीं की जा सकती है तो आरोपी को डायरी में प्रविष्टियों के साथ मजिस्ट्रेट के पास भेजा जाना चाहिए, इसलिए यह इस प्रकार है कि एक पुलिस अधिकारी गिरफ्तार व्यक्ति को रखने का हकदार है।

के प्रयोजनों के लिए अधिकतम 24 घंटे की अवधि के लिए हिरासत में जांच पड़ताल की। परिणामी स्थिति यह है कि प्रारंभिक अवधि

गिरफ्तार व्यक्ति की अभिरक्षा जब तक कि उसे किसी के सामने पेश नहीं किया जाता है।

मजिस्ट्रेट न तो संदर्भित है और न ही मजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड के आदेश के अनुसरण में है। वास्तव में रिमांड की शक्तियाँ

मजिस्ट्रेट को दिया गया धन धारा की उप-धारा (1) के संदर्भ में किसी अभियुक्त को उसके समक्ष पेश किए जाने के बाद ही प्रयोग करने योग्य हो जाता है।

167. "

" (13) कुछ समय के लिए परंतुक (ए) को दिमाग से बाहर रखते हुए आइए हम धारा 167 की उप-धारा (2) के शब्दों को देखें। यह उप-खंड

मजिस्ट्रेट को अधिकार देता है जिसके सामने एक आरोपी को पेश किया जाता है

रिमांड के उद्देश्य से, चाहे उसके पास मामले की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र हो या नहीं, आरोपी को पुलिस हिरासत में या न्यायिक हिरासत में 15 दिनों से अधिक की अवधि के लिए हिरासत में रखने का आदेश देना।

सब कुछ "। गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

78. हम यह मानेंगे कि रिमांड आदेश, चाहे वह पारगमन रिमांड आदेश हो, वह है जो आई. डी. 1 की धारा 167 के तहत पारित किया जाता है और हालांकि यह अपीलार्थी को पेश करने के लिए हो सकता है, इसमें धारा 167 के अर्थ के भीतर निरंतर निरोध को अधिकृत करना शामिल है।

CR.P.C की धारा 428 का प्रभाव। 79. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 428 इस प्रकार है -

निम्नलिखित है:

दोषसिद्धि, ऐसे दोषसिद्धि पर उस पर लगाए गए कारावास की अवधि के विरुद्ध निर्धारित की जाएगी, और इस तरह के दोषसिद्धि पर कारावास से गुजरने का दायित्व उस पर लगाए गए कारावास की अवधि के शेष, यदि कोई हो, तक सीमित होगा। उसे:

[बशर्ते कि धारा 433-ए में निर्दिष्ट मामलों में, निरोध की ऐसी अवधि चौदह वर्ष की अवधि के विरुद्ध निर्धारित की जाएगी।

उस खंड में संदर्भित।] "

80. यदि इस मामले में आदेश के अनुसार नजरबंदी को Cr.P.C की धारा 167 के अर्थ के भीतर हिरासत के रूप में माना जाना है, तो क्या यह नहीं होगा?

यदि दोषी ठहराए जाने के बाद सजा दी जाती है तो धारा 428 के अर्थ के भीतर नजरबंदी की अवधि को निरोध के हिस्से के रूप में माना जाएगा।

81. क्या धारा 428 के प्रावधान उन मुद्दों पर प्रकाश डालते हैं जिन पर हमें निर्णय लेने के लिए कहा जाता है? 82. धारा 428 दोषी ठहराए गए व्यक्ति को हिरासत की अवधि प्राप्त करने में सक्षम बनाती है जो उसने जांच, जांच या पूछताछ के दौरान बिताई है।

कारावास की अवधि के विरुद्ध मुकदमा शुरू किया गया।

83. इस संदर्भ में, हम सरकार में रिपोर्ट किए गए इस अदालत के फैसले को देख सकते हैं। आंध्र प्रदेश और अन्य आदि। ऐनी

वेंकटेश्वर राव आदि। 1 3. उक्त मामले में एक में अपीलार्थी 13 AIR 1977 SC 1096

अपीलों को 18.12.1969 पर निवारक निरोध अधिनियम के तहत हिरासत में लिया गया था। निवारक निरोध से रिहा होने के बाद उन्हें कुछ अपराधों के संबंध में अप्रैल, 1970 में मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था। बाद में उन्हें दोषी ठहराया गया था। इस न्यायालय ने इस तर्क पर विचार करते हुए कहा कि धारा 428 के प्रावधानों का लाभ अपीलार्थी को मिलना चाहिए:

" तर्क यह है कि धारा में निरोध की अभिव्यक्ति अवधि 428 इसमें निवारक निरोध अधिनियम या आंतरिक सुरक्षा रखरखाव अधिनियम के तहत हिरासत शामिल है। यह सच है कि खंड

एक अभियुक्त व्यक्ति द्वारा की गई 'निरोध की अवधि' की बात करता है, लेकिन यह स्पष्ट रूप से कहता है कि उल्लिखित निरोध को संदर्भित करता है
जिस मामले में अभियुक्त व्यक्ति को दोषी ठहराया गया है, उसकी जाँच, जाँच या मुक़दमे के दौरान हिरासत। इस धारा में यह स्पष्ट किया गया है कि दोषी ठहराए जाने पर अभियुक्त पर लगाए गए कारावास की अवधि के खिलाफ हिरासत की जिस अवधि को निर्धारित करने की अनुमति दी गई है, वह उसी 'मामले' के संबंध में जांच, जांच या मुकदमे के दौरान होनी चाहिए जिसमें उसे दोषी ठहराया गया है। इसलिए हम उच्च न्यायालय से सहमत हैं कि जिस अवधि के दौरान रिट याचिकाकर्ता निवारक हिरासत में थे, उसे धारा 428 के तहत लगाए गए कारावास की अवधि के खिलाफ निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

उन पर "।

84. हम यह भी देख सकते हैं कि अजमेर सिंह और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य 1 4 इस सवाल से निपटने के लिए कि क्या लाभ

Cr.PC की धारा 428 की धारा दोषी ठहराए गए व्यक्ति के लिए उपलब्ध थी और सेना अधिनियम के तहत कोर्ट मार्शल द्वारा सजा सुनाए जाने के साथ-साथ इस अदालत ने यह विचार रखा कि लाभ उपलब्ध नहीं है।

न्यायालय ने कहा: -

" (12) इस धारा में दोषी ठहराए जाने की तारीख से पहले एक ही मामले की 'जांच, जांच या मुकदमे' के दौरान किसी आरोपी व्यक्ति द्वारा की गई हिरासत की अवधि को निर्धारित करने का प्रावधान है। 'जाँच' शब्द को धारा 2 (एच) में परिभाषित किया गया है।

कोड इस प्रकार है:

' 2 (ज) 'जाँच' में एक पुलिस अधिकारी या किसी व्यक्ति (मजिस्ट्रेट के अलावा) द्वारा किए गए साक्षय के संग्रह के लिए इस संहिता के तहत सभी कार्यवाहियां शामिल हैं।

14 एयर 1987 एससी 1646 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

इस ओर से मजिस्ट्रेट "। कोर्ट मार्शल द्वारा मुकदमा चलाए जाने वाले व्यक्तियों के मामले में संहिता के तहत किसी भी पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट द्वारा अधिकृत किसी भी व्यक्ति द्वारा कोई जांच नहीं की जाती है।

की ओर से "।

85. एक ऐसी योजना है जिसके बारे में संहिता द्वारा खुलासा किया गया है

एक अभियुक्त की गिरफ्तारी। प्रारंभिक बिंदु बिना वारंट के एक पुलिस अधिकारी द्वारा संज्ञेय अपराध के संबंध में व्यक्ति की गिरफ्तारी और हिरासत प्रतीत होता है। वह उसे हिरासत में ले सकता है और जाँच के दौरान उससे पूछताछ कर सकता है। हालाँकि, अधिकारी गिरफ्तारी के स्थान से उस स्थान तक की यात्रा के लिए लिए गए समय को छोड़कर 24 घंटे से अधिक समय तक अभियुक्त को हिरासत में नहीं रख सकता है जहाँ मजिस्ट्रेट मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम है। यदि वह आरोपी को पेश नहीं कर सकता है और जांच अधूरी है, तो अधिकारी गिरफ्तार व्यक्ति को निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश करने के लिए बाध्य है। निकटतम मजिस्ट्रेट या

हो सकता है कि इसका अधिकार क्षेत्र न हो। वह निरंतर हिरासत का आदेश दे सकता है

रिमांड के अनुरोध के आधार पर व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया। वह काफी हद तक केस डायरी में प्रविष्टियों पर और इस तरह के रिमांड की आवश्यकता से संतुष्ट होने पर भरोसा करता था जो कारणों से प्रकट होना चाहिए। मजिस्ट्रेट पहले 15 दिनों (यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में, पहले 30 दिनों) के दौरान पुलिस हिरासत का आदेश दे सकता है। ऐसी अवधि के बाद, मजिस्ट्रेट हिरासत का निर्देश दे सकता है जिसे न्यायिक हिरासत या ऐसी अन्य हिरासत के रूप में वर्णित किया गया है जिसे वह उचित समझे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मजिस्ट्रेट पहले 15 दिनों के दौरान पुलिस हिरासत को पूरी तरह से अस्वीकार कर सकता है। वह पहले 15 दिनों के दौरान एक बार में नहीं बल्कि किश्तों में पुलिस हिरासत दे सकता है। मजिस्ट्रेट के लिए यह भी खुला है कि वह गिरफ्तार व्यक्ति को जमानत पर रिहा करे।

86. यदि गिरफ्तार व्यक्ति को जाँच की अवधि के दौरान हिरासत में लिया जाता है, तो वह इस अवधि को गिन सकता है, यदि उस पर अंततः आरोप लगाया जाता है, मुकदमा चलाया जाता है और दोषी ठहराया जाता है।

Cr.P.C की धारा 428 के प्रावधानों के आधार पर। हम किसी जांच या मुकदमे की अवधि के दौरान अभियुक्त की अभिरक्षा से संबंधित नहीं हैं जो Cr.P.C की धारा 309 द्वारा अनिवार्य रूप से शासित मामला है। इसमें

संदर्भ में, यह याद रखना चाहिए कि धारा 428 के तहत निर्वासन का लाभ प्राप्त करने के लिए हर नजरबंदी पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। निवारक निरोध के आदेश के तहत बिताई गई अवधि को किसी अपराध की जांच के संबंध में नहीं माना जा सकता है। (देखें ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1096)

87. अन्य बातों के साथ-साथ सेना अधिनियम के तहत कार्यवाही के अनुसार नजरबंदी का कोई महत्व नहीं है। (एआईआर 1987 एससी 1646 देखें)

88. इस प्रकार, धारा 428 के तहत 'जांच के दौरान निरोध' धारा 167 के तहत आदेश के अनुसार निरोध से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है।

89. धारा 167 के तहत आगे की योजना वह अभिरक्षा है

(निरोध/अभिरक्षा) जैसा कि ऐसे प्रावधानों के तहत अधिकृत है, यदि यह आरोप पत्र दायर किए बिना अधिकतम अवधि की सीमा को पार कर जाता है, तो निरोध में व्यक्ति को डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने का अधिकार देता है। वास्तव में, व्यक्ति जमानत देने में असमर्थ होने के कारण हिरासत में रह सकता है।

लेकिन वह निस्संदेह मजिस्ट्रेट/सुपीरियर कोर्ट के आदेशों के तहत हिरासत में बिताए गए पूरे समय को धारा 428 के तहत धारा 167 के तहत शक्तियों का प्रयोग करने का हकदार होगा।

आदेश के तहत अवैधता का प्रभाव

धारा 167 CR.PC।

90. अब, एक पहलू को स्पष्ट करना आवश्यक है। एक आदेश का उद्देश्य धारा 167 के तहत एक व्यक्ति को रिमांड पर लेना है। इसे बिना पालन किए बनाया जाता है। इसके तहत अनिवार्य आवश्यकताओं के साथ। इसके परिणामस्वरूप वास्तविक अभिरक्षा होती है। अभिरक्षा की अवधि डिफ़ॉल्ट जमानत के रूप में गिनेगी। धारा 167 (3) अनिवार्य करती है कि यदि पुलिस हिरासत का आदेश दिया जाता है तो कारण दर्ज किए जाएं। दिमाग का उपयोग होना चाहिए। यदि दिमाग का पूरी तरह से गैर-अनुप्रयोग या कारण दर्ज नहीं किए जाते हैं, जबकि यह अभ्यास को अवैध और हस्तक्षेप के लिए उत्तरदायी बना सकता है, तो आदेश के तहत वास्तविक निरोध, निश्चित रूप से डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए गिना जाएगा। इसी तरह, पिछली संहिता (1898) के विपरीत, वर्तमान संहिता धारा 167 (2) के परंतुक के खंड (बी) में दिए गए प्रावधान के अनुसार अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने का आदेश देती है। उक्त प्रावधान का पालन किए बिना आदेशित अभिरक्षा अवैध हो सकती है। लेकिन वास्तविक हिरासत से गुजरना फिर से डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए गिना जाएगा।

91. एक और उदाहरण लीजिए। मजिस्ट्रेट पुलिस हिरासत देता है

15 दिनों के लिए लेकिन पहले 15 दिनों के बाद, (यू. ए. पी. ए. द्वारा कवर किए गए मामले में नहीं)। इसे चुनौती नहीं दी जाती है। वास्तविक अभिरक्षा से गुजरना पड़ता है। क्या इसकी गिनती नहीं होगी?

निसन्देह, यह होगा। इस शक्ति का प्रयोग अवैध रूप से किया गया था, लेकिन फिर भी कथित तौर पर धारा 167 के तहत किया जाता है। जो मायने रखता है वह यह है कि 'नजरबंदी' का सामना करना पड़ा। विवादित निर्णय में लिया गया दृष्टिकोण कि अपीलार्थी को हिरासत में रखने वाले मजिस्ट्रेट के किसी भी वैध प्राधिकरण/आदेश के बिना धारा 167 के उद्देश्य के लिए अभिरक्षा नहीं हो सकती है, हमें सही नहीं

लगता है। यह निष्कर्ष कि यदि कोई अवैधता प्राधिकरण को प्रभावित करती है, तो यह 'हिरासत' को अधिकृत नहीं करेगा, उपरोक्त हमारे निष्कर्ष से असंगत है।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

92. इसलिए, यदि न्यायालय धारा 167 के तहत आह्वान और कार्य करने का इरादा रखता है, तो निरोध योग्य होगा, भले ही पारित करने में अवैधता हो।

आदेश दिया। ऐसे मामलों में जो बात मायने रखती है वह है वास्तविक हिरासत।

93. हालाँकि, जब न्यायालय धारा 167 के तहत कार्य करने का इरादा नहीं रखता है, तो न्यायालय के आदेश के अनुसार शामिल निरोध धारा 167 के तहत निरोध के रूप में योग्य नहीं हो सकता है।

न्यायिक ग्राहक और पुलिस ग्राहक

94. अब, हमें इस सवाल पर पूरी तरह से विचार करना चाहिए कि क्या उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार नजरबंदी हिरासत के बराबर है।

Cr.P.C की धारा 167 का अर्थ. निस्संदेह उक्त प्रावधान में अभिरक्षा को सामान्य रूप से पुलिस अभिरक्षा और न्यायिक अभिरक्षा के रूप में समझा जाता है। अभिरक्षा की अवधि गिरफ्तारी के समय से शुरू नहीं होती है, बल्कि उस समय से शुरू होती है जब आरोपी को पहले रिमांड पर लिया जाता है (1986 (3) एस. सी. सी. 141)। आई. डी. 1. (यू. ए. पी. ए. के तहत नहीं) के तहत आने वाले मामले में पुलिस हिरासत केवल पहले 15 दिनों ((1992) 3 एस. सी. सी. 141) के दौरान दी जा सकती है। पहले 15 दिनों के दौरान कोई संदेह नहीं है कि अदालत न्यायिक हिरासत या पुलिस का आदेश दे सकती है।

अभिरक्षा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 167 (2) के अंतिम प्रावधान में कहा गया है कि

अठारह वर्ष से कम आयु की महिला का निरोध, हिरासत गृह या मान्यता प्राप्त सामाजिक संस्थान की अभिरक्षा में रहने के लिए अधिकृत होगा।

95. पुलिस हिरासत और न्यायिक हिरासत में क्या अंतर है?

हिरासत में? जब किसी व्यक्ति को पुलिस हिरासत में भेज दिया जाता है, तो वह पुलिस अधिकारियों की विशेष हिरासत में चला जाता है। किसी मामले में सच्चाई का पता लगाने के लिए 'अभिरक्षा पूछताछ' अनिवार्य है जो इस तरह की अभिरक्षा के लिए पर्याप्त आधार है। मजिस्ट्रेट को निस्संदेह इस तरह की हिरासत में रिमांड की आवश्यकता के बारे में आश्वस्त होना चाहिए। कारणों को दर्ज किया जाना चाहिए। न्यायिक अभिरक्षा आमतौर पर जेल में अभिरक्षा होती है। इसे जेल अभिरक्षा भी कहा जाता है। इस प्रकार, जेल अभिरक्षा और न्यायिक अभिरक्षा समान हैं। जेल जेल विभाग के अंतर्गत आती हैं और उक्त विभाग के कर्मचारियों द्वारा कार्यरत होती हैं। इसलिए जेल हिरासत में व्यक्ति अप्रत्यक्ष रूप से, जेल अधिकारियों के माध्यम से, अदालत की हिरासत में है। पुलिस अधिकारी के पास न्यायिक हिरासत में किसी व्यक्ति तक पहुंच नहीं होती है जैसा कि पुलिस हिरासत में किसी व्यक्ति के मामले में होता है। जब तक अनुमति नहीं ली जाती है और प्राप्त नहीं की जाती है जो स्पष्ट रूप से ऐसी शर्तों के अधीन होगी

क्योंकि अदालत न्यायिक हिरासत में व्यक्ति से पुलिस अधिकारियों द्वारा पूछताछ नहीं की जा सकती है। अब एक मामले में, आम तौर पर, किसी व्यक्ति को रिमांड का आदेश देने के बजाय

जमानत पर रिहा किया जा सकता है। यह एक सवाल है कि क्या कोई मामला बनाया गया है [2021] 5 एस. सी. आर.

प्रत्येक मामले के तथ्यों में निर्णय लिया जाना। कानून द्वारा जमानत देने के संबंध में प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं जिनका पालन किया जाना चाहिए। लेकिन अगर जमानत नहीं दी जाती है तो संज्ञेय अपराध के संबंध में पुलिस द्वारा गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को हिरासत में भेजा जाना चाहिए। Cr.P.C की धारा 167 के पढ़ने से यह अपरिहार्य है।

96. री में। एम. आर. वेंकटरमन और अन्य ", एक याचिका दायर की गई थी

अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट की मांग करना कि याचिकाकर्ताओं को एक जिले की केंद्रीय जेल में भेज दिया गया था जो अन्य था।

उस की तुलना में जिसमें मुकदमा चलाया जा रहा था। अदालत ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित निर्णय दिया:

" पहले बिंदु पर, हमें ऐसा लगता है कि कोई अवैधता या अनियमितता नहीं है

प्रतिबद्ध था। धारा (167) एक मजिस्ट्रेट को अधिकार देती है -

किसी कैदी को ऐसी अभिरक्षा में भेजने की अधिकारिता जो वह उचित समझे।

धारा 344 के संबंध में "जैसा वह उचित समझता है" शब्दों का उपयोग नहीं किया गया है।

रिमांड के आदेश के लिए; लेकिन धारा में ऐसा कुछ भी नहीं है जो

यह सुझाव देता है कि आरोप पत्र दायर किए जाने के बाद, मजिस्ट्रेट

जिस अभिरक्षा के संबंध में उसे समान स्वतंत्रता नहीं है

याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने शब्दों का उल्लेख किया है कैदी अधिनियम की धारा 29 के अनुसार, केवल

वही प्रांत जेलों का महानिरीक्षक है; लेकिन इसके द्वारा कैदी अधिनियम की धारा 29 इन पर लागू नहीं होती है

एक विचाराधीन कैदी; न ही हम एक के स्थानांतरण के साथ काम कर रहे हैं

कैदी। जब भी किसी अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष लाया जाता है और अदालत रिमांड का आदेश जारी करती है, मजिस्ट्रेट ने पूरा कर लिया है

स्वतंत्रता, जहाँ तक हम देख सकते हैं, अभियुक्त को किसी भी चीज़ के लिए रिमांड करने की अभिरक्षा वह उचित समझता है।"

[जोर दिया गया]

97. नजरबंदी की अवधारणा हालांकि संबंधित कानून में परिचित है

निवारक निरोध के लिए, इसमें आधार अलग हैं। निवारक निरोध के कानून में नजरबंदी वह है जिसकी अनुमति कानून के तहत ही दी जाती है और ऐसे आदेश वास्तव में कार्यपालिका द्वारा दिए जाते हैं। इसके अलावा, धारा (167) के तहत निरोध में नजरबंदी के रूप में निवारक निरोध शामिल नहीं होगा जैसा कि हमने Cr.P.C की धारा 428 के प्रभाव से संबंधित चर्चा में देखा है।

15 एयर 1948 मैड 100 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

98. हालाँकि, दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा अपने दिनांकित आदेश में पारित आदेश में मौजूद नजरबंदी की सामग्री को लेते हुए

28.08.2018 , यदि यह धारा 167 के तहत पारित पाया जाता है, तो इसे उसके तहत हिरासत में लिया जाएगा। अपीलार्थी के परिसर से बाहर निकलने पर पूर्ण निषेध और आम निवासियों के अलावा अन्य व्यक्तियों के साथ बातचीत करने के खिलाफ निषेधाज्ञा के साथ इस मामले में आदेश के अनुसार नजरबंदी की अवधारणा और उसकी रक्षा करने के लिए नहीं बल्कि शर्त को लागू करने के लिए गार्ड की स्थिति अपीलार्थी को न्यायिक हिरासत में रखेगी। धारा 167 ऐसी अभिरक्षा की बात करती है जो वह उचित समझती है। यदि यह धारा 167 के तहत आदेशित पाया जाता है तो यह गिना जाएगा।

99. विवादित फैसले में उच्च न्यायालय डिफ़ॉल्ट जमानत को अस्वीकार करने के लिए निम्नलिखित कारण बताता है:

दिल्ली द्वारा पारगमन रिमांड आदेश पर रोक लगा दी गई

(1)

28/10/2018 पर उच्च न्यायालय।

(2)

अपीलार्थी को घर में नजरबंद कर दिया गया था

दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्देश जिसके दौरान जांच अधिकारी को अवसर नहीं मिला

उससे पूछताछ करना।

(3)

दिल्ली उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की गिरफ्तारी को रद्द कर दिया

अभिनिर्धारित करना कि अपीलार्थी का निरोध अवैध है।

(4)

नजरबंदी को अवैध घोषित करने के अनुसार,

अपीलार्थी को रिहा कर दिया गया। ऐसा नहीं है कि अपीलार्थी को जमानत पर रिहा कर दिया गया था, लेकिन रिहा होने के बाद, अपीलार्थी को इस न्यायालय के एक आदेश द्वारा संरक्षित किया जाता है जिसमें

एफ. आई. आर. के प्रति अपीलार्थी की चुनौती के लंबित रहने के दौरान जांच एजेंसी को दंडात्मक कदम उठाने से रोकना।

(5)

माननीय उच्चतम न्यायालय ने चुनौती को खारिज कर दिया है

एफ. आई. आर. को रद्द करने के लिए अपीलार्थी को सत्र न्यायालय के समक्ष गिरफ्तारी पूर्व जमानत/सुरक्षा प्राप्त करने की स्वतंत्रता के साथ 4 सप्ताह का संरक्षण प्रदान किया गया। अपीलार्थी द्वारा गिरफ्तारी पूर्व जमानत देने में विफल रहने के बाद माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को आत्मसमर्पण करने के लिए समय दिया। अपीलार्थी ने अंततः एन. आई. ए. के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया।

दिल्ली 14/04/2020 पर। अपीलार्थी के आत्मसमर्पण करने के बाद ही मजिस्ट्रेट ने पुलिस हिरासत को अधिकृत किया, जिसके बाद अपीलार्थी से पूछताछ की गई।

इसने आगे कहा:

" सीएमएम ने 28.08.2018 पर ट्रांजिट रिमांड की अनुमति दी। दिल्ली उच्च न्यायालय ने एक अंतरिम आदेश द्वारा पारगमन रिमांड पर रोक लगा दी और फिर अंत में पारगमन रिमांड के आदेश को दरकिनार कर दिया, जिससे 2018 (नजरबंदी की अवधि) तक की अवधि के दौरान हिरासत को अवैध माना गया, फिर, हमारी राय में, मजिस्ट्रेट के आदेश द्वारा अधिकृत हिरासत के अभाव में, अपीलकर्ता Cr.PC की धारा 167 की उप-धारा (2) के तहत वैधानिक डिफ़ॉल्ट जमानत की पात्रता का दावा नहीं कर सकता है।

यह बना रहता है:

" हमारे लिए ऐसी स्थिति का अनुमान लगाना संभव नहीं है जहाँ

हालाँकि अपीलार्थी को अवैध और गैरकानूनी माना जाता है, मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकरण को असमर्थनीय बनाना, फिर भी Cr.P.C की धारा 167 की उप-धारा (2) के उद्देश्य के लिए एक अधिकृत निरोध के रूप में माना जाना चाहिए। हमारे विचार में अपीलार्थी को हिरासत में लेने वाले मजिस्ट्रेट के किसी भी वैध प्राधिकरण/आदेश के बिना, पदधारी डिफ़ॉल्ट जमानत का हकदार नहीं होगा।

अंत में, यह कहता है:

" नतीजतन, हम मानते हैं कि 28.08.2018 से 01.10.2018 तक की अवधि को 90 दिनों की अवधि की गणना से बाहर रखा जाना चाहिए क्योंकि उक्त अभिरक्षा को उच्च न्यायालय द्वारा कानून में अस्थिर माना गया है।

दिल्ली का न्यायालय।"

क्या मैजिस्ट्रेट/कोर्ट का विचार करता है

धारा (167) के तहत कार्रवाई करते समय संपत्ति/विवरण की वैधता।

100. दिल्ली उच्च न्यायालय ने अपने दिनांकित 01.10.2018 के फैसले में पाया है कि रिमांड का आदेश अवैध है क्योंकि अनुच्छेद 22 (1) का उल्लंघन किया गया था। अनुच्छेद 22 (1) गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को इस तरह की गिरफ्तारी के आधार के बारे में जल्द से जल्द सूचित किए बिना हिरासत में नहीं रखने का मौलिक अधिकार देता है। यह हिरासत में लिए गए व्यक्ति के लिए अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी से परामर्श करने और उसका बचाव करने के मौलिक अधिकार को भी घोषित करता है। अब गिरफ्तारी के बाद हिरासत होती है। अनुच्छेद 22 (1) जिस बात से संबंधित है, वह यह है कि निरोध का समर्थन अधिनियम की पूर्ति द्वारा किया जाना चाहिए।

उसमें निर्दिष्ट अधिकार। इसलिए कड़ाई से कहें तो अनुच्छेद 22 (1) गिरफ्तारी की वैधता पर नहीं जाता है।

101. अब, जहां तक अनुच्छेद 22 (1) के तहत शर्तों को पूरा न करने और रिमांड की शक्ति का प्रयोग करने वाले मजिस्ट्रेट का कर्तव्य है, गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

हम इस न्यायालय के तीन विद्वान न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए निर्णय पर ध्यान देते हैं: मधु लिमये और अन्य; 1 6. इसमें याचिकाकर्ताओं को धारा 188 के तहत अपराध के लिए गिरफ्तार किया गया था

आई. पी. सी. जो गैर-संज्ञेय था। अधिकारी ने गिरफ्तार व्यक्तियों को उनकी गिरफ्तारी का कारण या उन अपराधों के बारे में जानकारी नहीं दी जिनके लिए उन्हें हिरासत में लिया गया था। यह एक ऐसा मामला था जिसमें मजिस्ट्रेट ने याचिकाकर्ताओं को जमानत पर रिहा करने की पेशकश की थी, लेकिन याचिकाकर्ताओं द्वारा जमानत देने से इनकार करने पर मजिस्ट्रेट ने उन्हें हिरासत में भेज दिया। इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही अनुच्छेद 32 के तहत थी। वास्तव में, यह एक पत्र पर शुरू किया गया था जिसमें शिकायत की गई थी कि गिरफ्तारी और नजरबंदी अवैध थी। यह तर्क दिया गया कि गिरफ्तारियाँ अवैध थीं क्योंकि उन्हें ऐसे अपराधों के लिए गिरफ्तार किया गया था जो संज्ञेय नहीं थे। वास्तव में, यह पाया गया कि गिरफ्तारी मजिस्ट्रेट के विशिष्ट आदेश के बिना की गई थी। यह.

यह भी तर्क दिया गया कि अनुच्छेद 22 (1) का उल्लंघन किया गया था। जो प्रासंगिक है वह निम्नलिखित चर्चा है:

" 12. एक बार जब यह दिखाया जाता है कि पुलिस अधिकारियों द्वारा की गई गिरफ्तारी अवैध थी, तो राज्य के लिए यह स्थापित करना आवश्यक था कि

रिमांड के चरण में मजिस्ट्रेट ने सभी प्रासंगिक मामलों में अपना दिमाग लगाने के बाद जेल हिरासत में हिरासत में रखने का निर्देश दिया। राज्य ऐसा करने में विफल रहा है। रिमांड के आदेश स्पष्ट रूप से नियमित हैं और प्रकट होते हैं।

यांत्रिक रूप से बनाया गया है। श्री चागला ने केवल इतना कहा है कि यदि गिरफ्तार किए गए व्यक्ति अपनी वैधता को चुनौती देना चाहते हैं तो उच्च न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता के उचित प्रावधानों के तहत स्थानांतरित किया जाना चाहिए था। लेकिन यह याद रखना चाहिए कि मधु लिमये और अन्य लोगों ने संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस अदालत का रुख करके संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों का पालन किए बिना हिरासत या जेल में कैद की शिकायत की है। यदि संविधान के अनुच्छेद 22 (1) के उल्लंघन के कारण उनकी गिरफ्तारी के बाद हिरासत में उनकी नजरबंदी जारी नहीं रह सकी तो वे तुरंत रिहा होने के हकदार थे। रिमांड के आदेश ऐसे नहीं हैं जो संवैधानिक दुर्बलताओं को ठीक कर सकें। यह निपटाता है

मधु लिमये के तीसरे विवाद का।

102. हम आगे ध्यान दे सकते हैं कि अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य और एक अन्य मामले में, यह न्यायालय अंधाधुंध गिरफ्तारी पर ध्यान दे रहा है।

कुछ निर्देश जारी किए। हम देख सकते हैं: - 16 (1969) 1 एससीसी 292 17 (2014) 8 एससीसी 273 [2021] 5 एस. सी. आर.

" 8.2 . मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 167 सी. आर. पी. सी. के तहत हिरासत को अधिकृत करने से पहले, उसे पहले संतुष्ट होना होगा कि की गई गिरफ्तारी कानूनी है और कानून और व्यक्ति के सभी संवैधानिक अधिकारों के अनुसार है।

गिरफ्तार लोग संतुष्ट हैं। यदि पुलिस अधिकारी द्वारा की गई गिरफ्तारी संहिता की धारा 41 की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करती है, तो मजिस्ट्रेट का कर्तव्य है कि वह उसे आगे हिरासत में रखने और आरोपी को रिहा करने के लिए अधिकृत न करे। दूसरे शब्दों में, जब किसी अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाता है, तो गिरफ्तारी करने वाले पुलिस अधिकारी को मजिस्ट्रेट को तथ्य, कारण और गिरफ्तारी के लिए उसके निष्कर्ष प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है और मजिस्ट्रेट को संतुष्ट होना चाहिए कि धारा 41 सीआरपीसी के तहत गिरफ्तारी की पूर्व शर्त पूरी हो गई है और इसके बाद ही वह किसी आरोपी को हिरासत में लेने के लिए अधिकृत करेगा। 8.3 . निरोध को अधिकृत करने से पहले मजिस्ट्रेट अपनी संतुष्टि को संक्षिप्त में दर्ज करेगा, लेकिन उक्त संतुष्टि को उसके आदेश से प्रतिबिंबित होना चाहिए। यह कभी भी इप्स डिक्सिट पर आधारित नहीं होगा।

पुलिस अधिकारी की, उदाहरण के लिए, यदि पुलिस अधिकारी ऐसे व्यक्ति को रोकने के लिए गिरफ्तारी को आवश्यक समझता है

आगे कोई अपराध करने या मामले की उचित जांच के लिए या किसी अभियुक्त को साक्षय के साथ छेड़छाड़ करने या प्रलोभन देने आदि से रोकने के लिए पुलिस अधिकारी मजिस्ट्रेट को निम्नलिखित के आधार पर तथ्य, कारण और सामग्री प्रस्तुत करेगा:

जिसे पुलिस अधिकारी अपने निष्कर्ष पर पहुँच गया था। मजिस्ट्रेट द्वारा निरोध को अधिकृत करते समय उन पर विचार किया जाएगा और लिखित रूप में अपनी संतुष्टि दर्ज करने के बाद ही कि मजिस्ट्रेट अभियुक्त को हिरासत में लेने के लिए अधिकृत करेंगे।

आगे हिरासत को अधिकृत नहीं करना। मजिस्ट्रेट को संतुष्ट होना चाहिए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 के तहत गिरफ्तारी के लिए पूर्ववर्ती शर्त है संतुष्ट होना। उसे यह भी संतुष्ट होना चाहिए कि गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के सभी संवैधानिक अधिकार संतुष्ट हैं। इसलिए, ऐसा नहीं है कि गिरफ्तारी एक उचित कार्य हो जाती है, हालांकि, यह अवैध हो सकता है, और मजिस्ट्रेट यांत्रिक रूप से और नियमित रूप से रिमांड का आदेश देता है। दूसरी ओर, मजिस्ट्रेट को रिमांड का आदेश देने से पहले गिरफ्तारी और निरोध के मामले में भी कानून के तहत अभियुक्त की स्वतंत्रता की गारंटी को बनाए रखने की आवश्यकता के प्रति सचेत रहना होगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभियुक्त को हिरासत में रखने की निरंतर आवश्यकता के बारे में संतुष्ट होने के अलावा।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

आदेशों के तहत ग्राहक अनुबंध

CR.P.C याचिकाएँ लिखने के लिए उपयुक्त है? 104. हमने देखा है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका में रिमांड के आदेश को चुनौती दिए जाने के खिलाफ कोई पूर्ण वर्जना नहीं है। होना चाहिए।

रिमांड पूरी तरह से अवैध होगा या अधिकार क्षेत्र की कमी से पीड़ित होगा, ऐसी रिट निहित होगी? यदि किसी मामले में यह स्थापित हो जाता है कि रिमांड का आदेश फिर से पूरी तरह से यांत्रिक तरीके से पारित किया जाता है तो यह झूठ होगा। अब ऐसे मामलों में व्यक्ति सामान्य रूप से रिमांड के अनुसार हिरासत में होगा। यदि रिट अदालत मजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड के आदेश को संशोधित करती है तो क्या स्थिति होगी। एक ऐसा मामला लें जहाँ मजिस्ट्रेट द्वारा पुलिस हिरासत का आदेश दिया जाता है। उच्च न्यायालय के एक अंतरिम आदेश से हम इसे लेते हैं कि उच्च न्यायालय न्यायिक हिरासत प्रदान करता है। यह आरोपी के 5 दिनों के लिए पुलिस हिरासत से गुजरने के बाद किया जाता है। अंत में,

हालाँकि रिट याचिका खारिज कर दी जाती है। न्यायिक हिरासत की अवधि का क्या होगा? क्या इसे डिफ़ॉल्ट जमानत देने के उद्देश्य से गुजरने वाली अवधि से बाहर रखा जाएगा? एक अन्य प्रासंगिक प्रश्न जो उत्पन्न होता है वह यह है कि क्या Cr.P.C की धारा 167 रिट कार्यवाही में लागू होती है। यदि कोई रिट याचिका आपराधिक कार्यवाही नहीं है, तो क्या धारा 167 लागू होगी या क्या प्रावधान केवल संहिता के तहत उत्पन्न होने वाली कार्यवाही पर लागू होता है? उदाहरण में, हमने दिया है कि यदि हम यह मानते हैं कि तथ्यों के बावजूद जो अन्यथा एक धारा 167 के तहत हिरासत के हिस्से के रूप में जेल हिरासत की अवधि सहित उचित हैं, तो यह नहीं होगा

माना जाता है कि यह विसंगत और अन्यायपूर्ण परिणाम पैदा कर सकता है। हम निम्नलिखित रूप में निर्वासित करते हैं:

हमने जो उदाहरण दिया है, उसमें उच्च न्यायालय जांच पर रोक नहीं लगाता है। याचिकाकर्ता जो पुलिस हिरासत में है, बनाया गया है

उच्च न्यायालय के अंतरिम आदेश द्वारा न्यायिक हिरासत में। उच्च न्यायालय भी अपने दिमाग को लागू करता है और पाता है कि रिट याचिकाकर्ता को पुलिस हिरासत में बनाए रखने के लिए किसी भी तरह से कोई मामला नहीं बनाया जाता है और फिर पारित करता है याचिकाकर्ता को न्यायिक हिरासत में बनाए रखने का आदेश। अंत में, रिट याचिका खारिज कर दी जाती है। ऐसे मामले में जहां जांच पर कोई रोक नहीं है और

वास्तव में पुलिस अभिरक्षा भी प्राप्त की गई थी और उसके बाद उच्च न्यायालय ने अभिलेखों को देखने के बाद यह भी पाया कि याचिकाकर्ता को केवल रिमांड के संशोधित रूप में जारी रखा जाना चाहिए, अभिरक्षा, जो अदालत के आदेश के तहत की जाती है, वह भी 'जांच के दौरान' है, जिसकी जांच पर भी रोक नहीं है, उसे गिना जाना चाहिए।

21] 5 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

105. अब हालांकि Cr.P.C. एक रिट याचिका पर लागू नहीं होगा, धारा 167 के तहत हिरासत को शामिल करने की आवश्यकता यह है कि निरोध

106. जिस महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर दिया जाना चाहिए वह यह है कि क्या दिल्ली उच्च न्यायालय धारा 167 के तहत शक्ति का प्रयोग कर रहा था जब उसने नजरबंदी का आदेश दिया था। उच्च न्यायालय में कार्यवाही एक रिट याचिका थी। जिस समय रिट याचिका दायर की गई थी, उस समय राहत की मांग की गई थी कि उसे रिहा करने के लिए बंदी प्रत्यक्षीकरण का एक रिट जारी किया जाए। आगे राहत की मांग की गई कि अपीलार्थी को बिना पूर्व सूचना के गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है ताकि वह उचित उपाय कर सके। जहाँ तक इस प्रार्थना का संबंध है कि अपीलार्थी को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है, यह एक राहत है जो Cr.P.C की धारा 167 के साथ नहीं है। यह कारण है मान लीजिए कि धारा 167 के तहत शक्ति का उपयोग गिरफ्तारी के बाद ही किया जाता है और जो मांगा जाता है वह है गिरफ्तार किए गए व्यक्ति की नजरबंदी का विस्तार।

107. हालाँकि, यह स्थिति थी जब रिट याचिका दायर की गई थी, तब तक रिट याचिका 2 बजे विचार के लिए आ गई थी: 45 28.08.2018 को दोपहर 2 बजे अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया गया: 15 अपराह्न। न्यायालय ने शुरू में 2: 45 अपराह्न निम्नलिखित आदेश पारित किया: -

" 4. जब मामला 2 बजे उठाया गया: 25 कल अपराह्न श्री.

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली के लिए स्थायी वकील (आपराधिक) राहुल मेहरा पेश हुए। इसके बाद न्यायालय ने लगभग 2 बजे निम्नलिखित आदेश पारित किया: 45 अपराह्न:

" 1. याचिका में शिकायत की गई है कि याचिकाकर्ता और उसके साथी सेहबा हुसैन को पी. एस. विश्रामबाग में दर्ज प्राथमिकी संख्या 4/2018 के अनुसार महाराष्ट्र पुलिस द्वारा उनके घर में रोक दिया गया है। पुणे।

2. नोटिस करें। श्री राहुल मेहरा, जो उपस्थित होते हैं और नोटिस स्वीकार करते हैं और

सूचित करता है कि वह कुछ निर्देश लेगा।

3. याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान वकील सुश्री नित्या रामकृष्णन ने अदालत को सूचित किया कि उनकी जानकारी यह है कि

याचिकाकर्ता को अभी उसके घर से दूर ले जाया जा रहा है। जब तक शाम 4 बजे मामला फिर से नहीं उठाया जाता, तब तक याचिकाकर्ता को दिल्ली से हटाने की कोई त्वरित कार्रवाई नहीं की जाएगी।

[यह दिनांकित 29.08.2018 में निकाले गए क्रम से लिया गया है

निर्णय।] गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

108. ऐसा प्रतीत होता है कि इस बीच, अपीलार्थी को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया जिसने पारगमन रिमांड आदेश पारित किया। इसके बाद जब मामले को 4 बजे विचार के लिए लिया गया: 00 शाम को और ट्रांजिट रिमांड को नोटिस करने पर, आदेश, दिनांक 28.08.2018, अन्य बातों के साथ-साथ, नजरबंदी का आदेश पारित किया गया। इसलिए, उस समय (शाम 4 बजे) जब आदेश पारित किया गया था, अदालत मामले पर विचार कर रही थी जब

अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया गया और ट्रांजिट रिमांड आदेश के माध्यम से रिमांड भी दे दिया गया।

109. इस मामले को देखने का एक तरीका यह है कि खुद को दिनांकित 28.08.2018 आदेश की सामग्री के बारे में याद दिलाया जाए। उक्त आदेश में, हम निम्नलिखित भाग को देखते हैं जिसे हम इस मोड़ पर पुनः प्राप्त करते हैं: -

पुलिस स्टेशन, विश्रामबाग, पुणे में पंजीकृत) मराठी भाषा में हैं और केवल ट्रांजिट रिमांड के लिए आवेदन पहले दायर किया गया था। सी. एम. एम. हिंदी में है। हालांकि, इन दस्तावेजों से यह पता लगाना संभव नहीं है कि उनके खिलाफ क्या मामला है।

याचिकाकर्ता है "।

110. न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि सभी दस्तावेजों का अनुवाद अगली तारीख (29.8.2018) पर न्यायालय को प्रदान किया जाए।

111. अब, अनुवाद की आपूर्ति के निर्देश का पालन नहीं किया जा सका जैसा कि निर्णय में पुनः प्रस्तुत किए गए दिनांकित 29.08.2018 (उक्त आदेश के पैरा 6 को देखें) के आदेश से स्पष्ट है।

112. अंत में, हम निर्णय में पुनः प्रस्तुत किए गए 29.08.2018 दिनांकित आदेश के पैराग्राफ 18 और 19 को देख सकते हैं:

" उन्हें सूचित किया जाता है कि उच्चतम न्यायालय ने उक्त याचिका में आज एक अंतरिम आदेश पारित किया है जिसमें याचिकाकर्ता के संबंध में सी. एम. एम. द्वारा पारित आदेश सहित पारगमन रिमांड आदेशों पर रोक लगा दी गई है और आदेश दिया है कि जिन लोगों को गिरफ्तार किया गया है, उनमें शामिल हैं -

याचिकाकर्ता नजरबंद रहेगा।

उपरोक्त विकास को देखते हुए, इस न्यायालय के लिए यह उचित नहीं होगा कि वह विद्वान सी. एम. एम. द्वारा पारित पारगमन रिमांड आदेश की वैधता पर विचार करना जारी रखे। अदालत इस पर विचार करती है

कल 2 बजे इस मामले को सूचीबद्ध करना उचित है: 15 अपराह्न किस समय तक

उच्चतम न्यायालय का आदेश उपलब्ध होगा।

30 अगस्त 2018 को 2 बजे सूची:

अपराह्न। "[2021] 5 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

113. अगले दिन यानी आई. डी. 1 पर अदालत ने एक और आदेश पारित किया। इसमें, वास्तव में आदेश में कहा गया है कि न्यायालय प्रक्रिया में था

पारगमन रिमांड की वैधता पर और इसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी की गिरफ्तारी की वैधता पर आदेश की घोषणा करना। यह आगे है

उन्होंने कहा कि अदालत को महाराष्ट्र राज्य के वकील द्वारा सूचित किया गया था कि अपीलार्थी और इसी तरह के कुछ अन्य लोगों की नजरबंदी जारी रखने का एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था। यह विशेष रूप से दर्ज किया गया है कि आदेश के आदेश को तब रोक दिया गया था उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर विचार करने का आदेश। इसके बाद, यह कहा जाता है कि चूंकि उच्चतम न्यायालय ने अंतरिम आदेश के अनुसार अपीलार्थी की नजरबंदी बढ़ा दी थी, इसलिए अदालत ने मामले को आगे बढ़ाना उचित नहीं समझा। उच्चतम न्यायालय के आदेशों की प्रतीक्षा की जा रही थी।

114. इसे और स्थगित कर दिया गया। इसके बाद, इस अदालत ने 28.09.2018 पर फैसला सुनाया और अंत में, फैसला सुनाया गया।

उच्च न्यायालय द्वारा 01.10.2018 पर। हम यह भी देख सकते हैं: - पैरा 5

मुख्य मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट (सीएमएम) द्वारा पारित 28 अगस्त 2018 "। इस स्तर पर यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि हालांकि जब रिट याचिका मूल रूप से दायर की गई थी तो चुनौती का आधार यह था कि याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी धारा 165 और 166 सीआरपीसी का उल्लंघन थी, 28 अगस्त 2018 को दलीलों के दौरान याचिका दायर करने के बाद हुए घटनाक्रमों के आलोक में, विद्वान सीएमएम के रिमांड आदेश को चुनौती दी गई थी। यह आगे तर्क दिया गया कि इसमें निहित अनिवार्य प्रावधान का उल्लंघन किया गया था

आई. पी. सी. की धारा 41 (1) (बी. ए.) "।

115. अदालत ने पाया कि रिट याचिका थी

यह विचारणीय है क्योंकि रिट याचिका पर ऐसे समय में विचार किया गया था जब पारगमन रिमांड आदेश पारित नहीं किया गया था। न्यायालय अंततः संविधान के अनुच्छेद 22 (1) और 22 (2) और धारा 57 के साथ पठित धारा 167 और Cr.P.C की धारा 41 (1) (बा) के उल्लंघन का पता लगाने के लिए आगे बढ़ता है। रिमांड आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है। अपीलार्थी की गिरफ्तारी के 24 घंटे से अधिक समय तक निरंतर हिरासत, रिमांड आदेश के अभाव में, जो दरकिनार कर दिया गया था, असमर्थनीय पाया गया। नतीजतन, अपीलार्थी की नजरबंदी को "अब तक समाप्त" घोषित कर दिया गया।

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

116. हम पहले ही पा चुके हैं कि उच्च न्यायालय सहित उच्च न्यायालय धारा 167 के तहत शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। की खोज

विवादित फैसले में उच्च न्यायालय इस आधार पर आगे बढ़ता प्रतीत होता है कि केवल एक मजिस्ट्रेट रिमांड का आदेश दे सकता है, यह सही नहीं लगता है।

117. निस्संदेह, जैसा कि अपीलार्थी ने बताया, उसे पुलिस अधिकारी द्वारा की गई गिरफ्तारी के आधार पर हिरासत में लिया गया था।

महाराष्ट्र में सक्षम अदालत के समक्ष, उन्होंने अपीलार्थी को दिल्ली में निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष व्यक्तिगत रूप से पेश किया और मजिस्ट्रेट ने एक आदेश पारित किया जिसे हमने रिमांड का आदेश पाया है। धारा 167। उच्च न्यायालय रिमांड आदेश की वैधता और अपीलार्थी की नजरबंदी को लेकर चिंतित था। बंदी प्रत्यक्षीकरण का एक रिट

कुछ असाधारण मामलों में चुनौती देने के माध्यम से भी झूठ बोलता है

रिमांड के आदेश। यदि अनुच्छेद 22 (1) का पालन नहीं किया जाता है और व्यक्ति को हिरासत में लिया जाता है तो यह एक ऐसा पहलू है जिसे मजिस्ट्रेट द्वारा रिमांड का आदेश देते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। नजरबंदी गिरफ्तारी का परिणाम है। अनुच्छेद 22 (1) गिरफ्तारी के बाद इस स्तर पर लागू होता है। यदि निरंतर निरोध के मामले में मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया जाता है, तो मजिस्ट्रेट नहीं है इससे अनजान होने की उम्मीद है। यह इस मायने में है कि उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ अनुच्छेद 22 (1) का उल्लंघन पाया है और मजिस्ट्रेट ने अति-परीक्षण किया है।

यह पारगमन रिमांड को अवैध बनाता है। जहाँ तक गिरफ्तारी की बात है

धारा 41 (1) (बी. ए.) के उल्लंघन में, निस्संदेह, यह एक ऐसा मामला है जो गिरफ्तारी की वैधता से संबंधित है जो निरोध से पहले का चरण है। उच्च न्यायालय ने पाया कि मजिस्ट्रेट ने इस सवाल पर अपना दिमाग नहीं लगाया था कि क्या गिरफ्तारी Cr.P.C की धारा 41 (1) (बीए) के अनुपालन में थी।

118. यह मधु लिमये (उपरोक्त) के फैसले के विपरीत है जहां इस अदालत ने पाया कि अनुच्छेद 22 (1) का उल्लंघन किया गया था और यहां तक कि

इस अदालत के समक्ष बहस के दौरान, अदालत को यह नहीं बताया जा सका कि गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों को उनकी गिरफ्तारी के कारणों या उन अपराधों के बारे में क्यों नहीं बताया गया जिनके लिए उन्हें हिरासत में लिया गया था। उक्त मामले में वास्तव में विशिष्ट मुद्दों में से एक गिरफ्तारी की वैधता के बारे में था, दोनों इस आधार पर कि अपराध गैर-संज्ञेय गिरफ्तारी थी जो पुलिस अधिकारी द्वारा अवैध रूप से की गई थी और अनुच्छेद 22 (1) का भी उल्लंघन था।

21] 5 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

गैर का प्रभाव-अभिगम्यता

14.4.2020 से 25.4.2020 तक पुलिस कस्टडी में आने वाली अन्वेषक एजेंसी के लिए आवेदन और आवेदन का प्रभाव।

119. नजरबंदी की अवधि को बाहर करने के लिए प्रतिवादी द्वारा उठाया गया यह सबसे गंभीर तर्क है। तर्क यह है कि नजरबंदी की अवधि के दौरान दिल्ली उच्च न्यायालय में कार्यवाही की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, कोई जांच नहीं की जा सकी। धारा 167 के तहत अभिरक्षा का उद्देश्य पुलिस को आरोपी से पूछताछ करने में सक्षम बनाना है और यदि वह अवसर मौजूद नहीं है तो अभिरक्षा की ऐसी अवधि, जैसा कि कथित है, धारा 167 के उद्देश्य के लिए योग्य नहीं होगी। दूसरे शब्दों में, तर्क यह प्रतीत होता है कि धारा 167 का उद्देश्य और योजना यह है कि अभियुक्त से पूछताछ करने के अवसर के साथ एक जांच की जाती है और फिर भी यह 90 दिनों की अवधि के भीतर पूरी नहीं होती है, जिसके बाद चूक जमानत का अधिकार उत्पन्न होता है। 28.08.2018 पर कार्यवाही द्वारा जब याचिका दायर की गई थी, उच्च न्यायालय ने पारगमन रिमांड पर रोक लगा दी और अपीलार्थी को महाराष्ट्र नहीं ले जाया जा सका। इसी आदेश से उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को नजरबंद कर दिया। जाँच एजेंसियों को पूछताछ करने के लिए कोई पहुँच प्रदान नहीं की गई थी

अपीलार्थी। ऐसी परिस्थितियों में, नजरबंदी के रूप में गुजरने की अवधि को बाहर रखा जाना चाहिए। यह उचित है कि संबद्ध तर्क, अर्थात्,

अपीलार्थी के 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण करने, 15.04.2020 पर पेश किए जाने और पुलिस हिरासत में भेजे जाने, जिसमें वह 25.04.2020 तक रहा, के प्रभाव पर विचार किया जाता है। तर्क यह है कि सामान्य कानून के तहत, अर्थात् यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) के तहत किए गए संशोधन के बिना, पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है और केवल पहले 15 दिनों के दौरान दी जा सकती है, इसके बाद पुलिस हिरासत नहीं दी जा सकती है। यू. ए. पी. ए. के मामले में, धारा 43 (डी) (2) के तहत Cr.P.C के संशोधित अनुप्रयोग को देखते हुए, 15 दिनों की अवधि को बढ़ाकर 30 दिन कर दिया गया है। इस प्रकार, मजिस्ट्रेट द्वारा 30 की अवधि के लिए पुलिस हिरासत दी जा सकती है।

दिन होते हैं। तर्क आगे यह है कि यदि यह अपीलार्थी के 14.04.2020 पर आत्मसमर्पण करने के आधार पर है और अदालत के समक्ष पेश किए जाने पर, उसे पुलिस हिरासत में भेज दिया गया है, तो 90 दिनों की अवधि केवल रिमांड की तारीख यानी 15.04.2020 से चलने लगेगी। अगर

अपीलार्थी का तर्क है कि घर में नजरबंदी के साथ शुरू की गई रिमांड की अवधि यानी 28.08.2018 को स्वीकार कर लिया जाता है, इसके परिणामस्वरूप 15.04.2020 पर दी गई पुलिस हिरासत को अस्वीकार्य माना जाएगा। इस संबंध में, इस तथ्य पर जोर दिया जाता है कि अपीलार्थी ने

15.04.2020 पर पुलिस हिरासत दिए जाने पर आपत्ति नहीं जताई थी। अपीलार्थी ने पुलिस हिरासत में गौतम नवलखा बनाम को स्वीकार कर लिया।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

15.04.2020 से शुरू होता है। यह केवल इस आधार पर संभव है कि 90 दिनों की अवधि चगंती सत्यनारायण (उपरोक्त) में निर्धारित कानून के संदर्भ में केवल 15.04.2020 पर शुरू होगी।

120. इसके विपरीत, अपीलार्थी का मामला इस प्रकार है: -

कानून में कोई आवश्यकता नहीं है कि व्यक्ति को अनुमति दी जानी चाहिए।

सभी मामलों में पुलिस हिरासत। आई. डी. 1 की धारा 167. यू. ए. पी. ए. के दायरे में नहीं आने वाले मामले में मजिस्ट्रेट को पहले 15 दिनों के दौरान पुलिस या अन्य हिरासत (न्यायिक हिरासत) देने की शक्ति प्रदान करती है। 15 दिनों की पहली अवधि के बाद, निस्संदेह, हिरासत पुलिस हिरासत नहीं हो सकती है, लेकिन इसकी कोई आवश्यकता नहीं है कि किसी भी पुलिस हिरासत को दिया जाना चाहिए। यह पूरी तरह से मजिस्ट्रेट/अदालत को तय करना है कि हिरासत पुलिस या न्यायिक होनी चाहिए या नहीं। इसके अलावा, यह तर्क दिया जाता है कि इस मामले में यू. ए. पी. ए. के तहत अपराध मुख्य अपराध हैं। पुलिस अभिरक्षा के माध्यम से 30 दिनों की अवधि उपलब्ध है। यह जांचकर्ता के लिए किसी भी समय पुलिस हिरासत की मांग करने के लिए खुला है।

रिमांड के दिन, लागू नहीं होते हैं। यह आगे तर्क दिया जाता है कि जाँच पर कोई रोक नहीं थी और पुलिस पूछताछ या जाँच की 30 दिनों की अवधि के दौरान अपीलार्थी से संपर्क कर सकती थी, लेकिन ऐसा नहीं किया गया। लिखित दलीलों में यह भी कहा गया है कि यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (2) (डी) का दूसरा प्रावधान यू. ए. पी. ए. मामलों में अनुपम कुलकर्णी (उपरोक्त) के फैसले को रद्द कर देता है और इसलिए, पहले 15 दिनों या 30 दिनों की सीमा के बिना न्यायिक हिरासत से भी किसी भी समय हिरासत की मांग की जा सकती है। परंतुक के संदर्भ में एक शपथ पत्र की आवश्यकता केवल तभी उत्पन्न होती है जब पुलिस द्वारा न्यायिक हिरासत से हिरासत ली जाती है। जांच एजेंसी इस तरह का हलफनामा दायर करने के लिए तैयार थी और नजरबंदी की अवधि के दौरान ऐसी अभिरक्षा या पूछताछ करने की अनुमति भी मांगें जो नहीं की गई थी। यह आगे तर्क दिया जाता है कि 14.04.2020 पर, अपीलार्थी ने एन. आई. ए. यानी पुलिस हिरासत के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। इसलिए, जब पुलिस हिरासत 15.04.2020 पर मांगी गई थी और 21.04.2020 पर फिर से बढ़ाई गई थी, तो न्यायिक हिरासत से पुलिस हिरासत में कोई स्थानांतरण नहीं होता है। इसलिए, यह तर्क दिया जाता है कि पुलिस हिरासत धारा 43 (डी) (2) (बी) के दूसरे प्रावधान के तहत नहीं थी।

यह बताता है कि पुलिस द्वारा इसके तहत आवश्यक कोई हलफनामा क्यों दायर नहीं किया गया था। पुलिस अभिरक्षा की मांग करने वाले आवेदन पर आपत्ति न करने में अपीलार्थी का आचरण 34 दिनों की नजरबंदी की अवधि की गिनती के लिए मामले को विफल नहीं कर सकता है। अपीलार्थी वास्तव में जाँच के उद्देश्य से 28.08.2018 पर पुलिस हिरासत में था। उसके सभी उपकरणों को जब्त कर लिया गया था

जाँच एजेंसी जिसने अपने घर पर कई घंटे बिताए थे और

सुबह से 2 बजे तक उसे रोक दिया: 15 पी. एम. जब वे आगे बढ़े

उसे मजिस्ट्रेट के पास।

121. कानून की योजना (Cr.P.C.) यह है कि जब कोई व्यक्ति

संज्ञेय अपराध के संबंध में वारंट के बिना गिरफ्तार किया गया, उनकी गिरफ्तारी के 24 घंटे के भीतर जांच पूरी होने की उम्मीद है।

यदि जाँच पूरी नहीं होती है, जैसा कि सामान्य रूप से मामला है, तो अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना चाहिए जो गिरफ्तारी के स्थान से सबसे करीब है, भले ही उसका अधिकार क्षेत्र हो या नहीं। द. अधिकारी द्वारा रखी गई केस डायरी में प्रविष्टियों के आधार पर मजिस्ट्रेट से यह उम्मीद की जाती है कि वह अपना दिमाग लगाएगा और यह तय करेगा कि आरोपी को रिमांड पर लिया जाना है या नहीं। अगर पुलिस पुलिस हिरासत के लिए अनुरोध करती है

जिसे स्वीकार कर लिया जाता है तो एक आदेश पारित किया जाना है और धारा 167 (3) के तहत कारण दर्ज किए जाने हैं। प्रभावी जाँच के लिए उचित मामलों में पुलिस हिरासत एक महत्वपूर्ण साधन है। इसके कई उपयोग हैं। इसमें अभियुक्त से पूछताछ करना शामिल है।

परिस्थितियां, और यदि संभव हो तो ऐसे बयान प्राप्त करना जो भविष्य के अभियोजन में प्रासंगिक हों। कुछ मामलों में हिरासत में पूछताछ स्पष्ट है।

अभियोजन और इसलिए अदालतों को एक पूरी तस्वीर देने की सख्त आवश्यकता है। अपीलार्थी का यह तर्क कि यह हमेशा मजिस्ट्रेट के लिए खुला है

केवल न्यायिक अभिरक्षा का आदेश देने के लिए और यहां तक कि केवल 90 दिनों की न्यायिक अभिरक्षा के साथ, डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए एक आवेदन विवादित नहीं हो सकता है। अभिरक्षा की प्रकृति जो भी हो, जब तक कि यह चार के भीतर आती है।

धारा 167 की दीवारें, यदि आवश्यक संख्या में दिन पुलिस/न्यायिक हिरासत/पुलिस और न्यायिक हिरासत में बिताए जाते हैं जो पर्याप्त है।

122. हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं हो सकता है कि कार्यात्मक परीक्षण को लागू किया जाए या कानून के उद्देश्य को ध्यान में रखा जाए कि पुलिस हिरासत प्राप्त करने का उद्देश्य दृष्टिहीन हो गया है। अपीलार्थी के अनुसार, नजरबंदी की अवधि को दिनांकित 28.08.2018 के आदेश की शर्तों पर न्यायिक हिरासत के रूप में माना जाना है जैसा कि बाद में बढ़ाया गया है। जांच अधिकारी, निस्संदेह, अपीलार्थी के घर जा सकते थे और उससे पूछताछ कर सकते थे। हालाँकि, यह सच है कि यदि उच्च न्यायालय से संपर्क किया गया होता, तो उसने अपीलार्थी को जाँच में अधिकारियों के साथ सहयोग करने का निर्देश दिया होता।

हालाँकि यह गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

अनुमान के क्षेत्र में रहता है। इस पहलू के प्रभाव पर बाद में विचार किया जाएगा।

123. हमें, इस संबंध में, 15.04.2020 पर प्राप्त पुलिस हिरासत के प्रभाव पर भी विचार करना चाहिए। जो आदेश दिया जाता है

15.04.2020 पर 7 दिनों के लिए और 21.04.2020 पर आगे बढ़ाया गया जो इसमें कोई संदेह नहीं है कि 25.04.2020 को छोटा कर दिया गया था। ध्यान देने वाली बात यह है कि पुलिस हिरासत केवल 15 दिनों के लिए दी जा सकती है और वह भी आम तौर पर पहले 15 दिनों के लिए। यू. ए. पी. ए. के तहत अपराधों के आरोपी व्यक्तियों के मामले में पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि 30 दिन है। यदि अपीलार्थी के मामले को स्वीकार किया जाना है तो यह बाद की कार्यवाही के अनुरूप होना चाहिए, अर्थात्, पुलिस अभिरक्षा दिनांक 15.04.2020 के आदेशों के अनुसार और

21.04.2020 . दूसरे शब्दों में, यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) (2) द्वारा संशोधित आई. डी. 2 की धारा 167 में यह विचार किया गया है कि आरोपी को पेश करने पर पुलिस हिरासत में रिमांड केवल पेश करने की तारीख से पहले 30 दिनों के दौरान दी जा सकती है और यह प्रतिवादी के मामले को आगे बढ़ाता है कि विशेष न्यायाधीश के समक्ष आरोपी को पेश करने पर रिमांड केवल आई. डी. 1 पर आरोपी को पेश करने के साथ हुई थी। अगर

अपीलार्थी के मामले में रिमांड वर्ष 2018 में हुई थी, तब यह वर्ष 2018 में रिमांड के पहले 30 दिनों के बाद भी पुलिस हिरासत में रिमांड के साथ पूरी तरह से असंगत होगी।

125. अपीलार्थी का जवाब है कि यू. ए. पी. ए. के तहत 15 दिनों की अवधि के अलावा 30 दिनों तक पुलिस हिरासत में रखा जा सकता है।

यू. ए. पी. ए. से जुड़े मामलों में किसी भी समय मांग की जाए और मंजूरी दी जाए। ऐसा प्रतीत होता है कि एक सांस में अपीलार्थी का मामला यह है कि यह यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (2) (बी) में विचार किए गए दूसरे परंतुक के तहत संभव है। यह तर्क दिया जाता है कि आम तौर पर Cr.P.C द्वारा कवर किए गए मामलों के विपरीत, यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में किसी भी समय पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है। यह भी है

हालाँकि, यह केवल तभी है जब कोई व्यक्ति न्यायिक हिरासत में है और [2021] 5 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

जाँचकर्ता न्यायिक अभिरक्षा के स्थान पर पुलिस अभिरक्षा प्राप्त करना चाहता है कि एक शपथ पत्र की आवश्यकता है। इस मामले में, यह अपीलार्थी का मामला है कि ऐसा कोई शपथ पत्र नहीं है। यही कारण है कि जब 15.04.2020 पर पुलिस हिरासत की मांग की गई थी, तो अपीलार्थी न्यायिक हिरासत में नहीं था। उसने पिछले दिन एन. आई. ए. के सामने आत्मसमर्पण कर दिया था। इसलिए इस विवाद को हल करना आवश्यक है - पता लगाएँ कि क्या अपीलार्थी का मामला कि यू. ए. पी. ए. के तहत आने वाले मामलों में किसी भी समय पुलिस हिरासत की मांग की जा सकती है, मान्य है।

126. यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी (2) इस प्रकार है:

" (2) संहिता की धारा 167 इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध से जुड़े मामले के संबंध में लागू होगी।

उप-धारा (2) में संशोधन,

(क) "पंद्रह दिन", "नब्बे दिन" और "साठ दिन" के संदर्भ, जहाँ कहीं भी वे होते हैं, उन्हें "तीस" के संदर्भ के रूप में माना जाएगा।

दिन "," नब्बे दिन "और" नब्बे दिन "क्रमशः; और
(ख) परंतुक के बाद, निम्नलिखित परंतुक जोड़े जाएंगे:

अर्थात्:

" बशर्ते कि यदि पूरा करना संभव न हो नब्बे दिनों की उक्त अवधि के भीतर जांच, न्यायालय कर सकता है यदि वह लोक अभियोजक की रिपोर्ट से संतुष्ट है

जाँच की प्रगति और इसके विशिष्ट कारण

अभियुक्त को नब्बे दिनों की उक्त अवधि से आगे हिरासत में रखना,

उक्त अवधि को एक सौ अस्सी दिनों तक बढ़ाएँ: बशर्ते कि यदि जाँच करने वाला पुलिस अधिकारी

इस अधिनियम के तहत, न्यायिक हिरासत में किसी भी व्यक्ति की न्यायिक हिरासत से पुलिस हिरासत के लिए जांच के उद्देश्यों के लिए अनुरोध, वह ऐसा करने के कारणों को बताते हुए एक हलफनामा दायर करेगा और यह भी कि

इस तरह की पुलिस हिरासत का अनुरोध करने में देरी, यदि कोई हो, के बारे में बताएँ।

127. धारा 43 (डी) (2) (ए) के तहत यह स्पष्ट है कि पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि 15 दिनों से बढ़ा दी गई है।

30 दिनों तक। अगला संशोधन वह है जो प्रासंगिक है जिसे दूसरे परंतुक में शामिल किया गया है। यह विचार करता है कि जांच अधिकारी न्यायिक हिरासत में किसी व्यक्ति की पुलिस हिरासत प्राप्त करने में देरी के कारणों और स्पष्टीकरण के साथ पूछताछ कर सकता है।

128. हम सोचेंगे कि धारा 167 के तहत स्थिति के रूप में

यू. ए. पी. ए. के तहत मामलों में लागू निम्नानुसार है:

गौतम नवलखा बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

निस्संदेह, पुलिस अभिरक्षा के माध्यम से 30 दिनों की अवधि की अनुमति है। यह न्यायालय इस आधार पर आगे बढ़ेगा कि विधायिका को पता है

मौजूदा कानून का जब यह कानून में परिवर्तन लाता है। दूसरे शब्दों में, इस अदालत ने अनुपम कुलकर्णी (ऊपर) में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह निर्धारित किया था कि धारा 167 के तहत, जो पुलिस हिरासत की अधिकतम अवधि के रूप में 15 दिनों का प्रावधान करती है, पुलिस के साथ किसी आरोपी की हिरासत मजिस्ट्रेट द्वारा रिमांड की तारीख से पहले 15 दिनों के दौरान ही दी जा सकती है। 15 दिन के बाद, रिमांड केवल न्यायिक हिरासत में दी जा सकती है। आम तौर पर, चूंकि 15 दिनों की अवधि को बढ़ाकर 30 दिन कर दिया गया है, इसका प्रभाव यह होगा कि यू. ए. पी. ए. के तहत आने वाले मामलों में इस सिद्धांत को लागू किया जाए।

(1992) 3 एस. सी. सी. 141 में घोषित, यू. ए. पी. ए. के तहत एक मामले में जांच अधिकारी को अधिकतम 30 दिनों की अवधि के लिए पुलिस हिरासत मिल सकती है, लेकिन यह

जहाँ तक धारा 43 (डी) (2) (बी) में दूसरे परंतुक का संबंध है, यह अनुपम कुलकर्णी (उपरोक्त) में कानून में बदलाव लाता है। यह विचार किया जाता है कि एक व्यक्ति जिसे न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया है और एन. आई. ए. को पहले 30 दिनों के दौरान पुलिस हिरासत नहीं दी गई है, कारणों को दिए जाने पर और देरी को समझाने पर भी, अदालत पुलिस हिरासत दे सकती है। परंतुक कानून में इस हद तक बदलाव लाता है कि यदि कोई व्यक्ति रिमांड के आधार पर न्यायिक हिरासत में है, तो दिए गए कारणों पर, देरी को समझाते हुए, अदालत को पहली रिमांड की तारीख से 30 दिनों से भी अधिक समय तक पुलिस हिरासत देने का अधिकार है। हम देख सकते हैं कि आतंकवाद निवारण अधिनियम की धारा 49 (2) समान सामग्री है जिसकी व्याख्या इस न्यायालय द्वारा ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 3946 में की गई है और निर्णय अपीलार्थी के मामले को आगे नहीं बढ़ाता है, हालांकि यह एक ऐसा मामला था जहां न्यायिक हिरासत में किसी व्यक्ति की पुलिस हिरासत मांगी गई थी, लेकिन 30 दिनों से अधिक।

15.04.2020 पर पुलिस हिरासत की मांग करने वाली रिमांड रिपोर्ट। इसे पहले 30 दिनों के भीतर मांगी गई रिमांड के रूप में मानते हुए, शुरू में 7 दिनों की अवधि के लिए रिमांड का आदेश दिया जाता है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि यह अवधि पुलिस हिरासत में थी। हम देख सकते हैं कि यू. ए. पी. ए. के तहत किसी आरोपी को न्यायिक हिरासत में भेजा जा सकता है। अभिरक्षा, पुलिस अभिरक्षा या जमानत। यदि यह तर्क कि पुलिस हिरासत किसी भी समय मांगी जा सकती है और यह उन मामलों तक सीमित नहीं है जहां [2021] 5 एस. सी. आर.

न्यायिक अभिरक्षा है, यह परंतुक की स्पष्ट शर्तों के खिलाफ जाएगी और यहां तक कि एक व्यक्ति जिसे जमानत पर रिहा किया जाता है, उसे भी 30 दिनों के बाद पुलिस अभिरक्षा में भेजा जा सकता है। यह असहनीय है। अपीलार्थी का मामला कि 15.04.2020 पर दी गई पुलिस हिरासत अनुमेय और सुसंगत थी

उसका मामला सही नहीं लगता है।

(2007) 5 एस. सी. सी. 773 में निर्णय

129. उच्च न्यायालय ने पश्चिम बंगाल राज्य बनाम में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर काफी भरोसा रखा। दिनेश डालमिया 1 8. तो यह भी

अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, श्री राजू। उक्त मामले में प्रतिवादी को नई दिल्ली में गिरफ्तार किया गया था। उसे चेन्नई में ट्रांजिट रिमांड पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। जाँच अधिकारी ने कलकत्ता के मामलों में कलकत्ता के न्यायालय के समक्ष पेशी वारंट के लिए अनुरोध किया क्योंकि

प्रतिवादी को सीबीआई मामले में गिरफ्तार किया गया था और हिरासत में लिया गया था

चेन्नई में मजिस्ट्रेट। उक्त प्रार्थना को स्वीकार कर लिया गया और आदेश को चेन्नई की अदालत में भेज दिया गया। कलकत्ता न्यायालय द्वारा एक और आदेश जारी किया गया था कि प्रतिवादी को चेन्नई में सी. बी. आई. मामलों में रिहा नहीं किया जाना चाहिए। उत्तरदाता को यह भी पता चला कि वह था

कलकत्ता में लंबित दो और मामलों में वांछित। उन्होंने स्वेच्छा से चेन्नई में मजिस्ट्रेट के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। यह कलकत्ता के मामलों के आधार पर था। प्रतिवादी को 13.03.2006 तक न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया। अंत में, प्रक्रियाएँ पूरी होने के बाद प्रत्यर्थी को कलकत्ता में मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। द इन्वेस्टीगेशन

कलकत्ता में मामले के अधिकारी ने 15 दिनों की पुलिस हिरासत की मांग की। प्रत्यर्थी ने यह तर्क देते हुए जमानत के लिए आवेदन किया कि उसने चेन्नई की अदालत में आत्मसमर्पण कर दिया था और आत्मसमर्पण की तारीख से 15 दिनों की अवधि बीत चुकी थी। अंत में, मजिस्ट्रेट के जमानत के आवेदन को खारिज करने और पुलिस हिरासत के आदेश के खिलाफ मामला कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष पहुंचा। कलकत्ता उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी द्वारा दायर संशोधन में पाया कि निरोध के समय से 90 दिनों से अधिक की अवधि समाप्त हो गई थी, जिसे 27.02.2006 से गिना जाना चाहिए था जब प्रत्यर्थी ने चेन्नई में न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण किया था। इसलिए, इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए प्रश्न यह था कि क्या निरोध की अवधि 27.02.2006 से शुरू हुई थी जब प्रतिवादी ने

सी. बी. आई. मामले के संबंध में चेन्नई में अदालत के समक्ष आत्मसमर्पण किया या क्या इसे 13.03.2006 से गिना जाना चाहिए जब प्रतिवादी को वास्तव में पुलिस द्वारा हिरासत में लिया गया

था और कलकत्ता में मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी

18 8 (2007) 5 एससी 773 गौतम नवलखा बनाम।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

चेन्नई में अदालत के समक्ष स्वेच्छा से आत्मसमर्पण करना संभव नहीं था

कलकत्ता में दर्ज मामलों के तहत हिरासत में होने के रूप में माना जाता है। वास्तव में, यह पाया गया कि आरोपी चेन्नई में सी. बी. आई. मामले के संबंध में न्यायिक हिरासत में है। न्यायालय ने निरंजन सिंह और अन्र मामले में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया। बनाम प्रभाकर राजाराम

खरोटे & Ors.[19] 19 ने दोहराया कि यदि कोई पूरी तरह से अलग अपराध है तो यह एक अलग अपराध होगा जिसके लिए पिछले मामले में निरोध को धारा 167 के उद्देश्य के लिए नहीं गिना जा सकता है।

130. वर्तमान में एक ऐसा मामला है जिसमें केवल एक प्राथमिकी, एक मामला है। यह एक ऐसा मामला है जिसमें गिरफ्तारी और पेश किए जाने के बाद

मजिस्ट्रेट को रिमांड पर लिया जाता है जिससे पूछताछ की जाती है। उच्च न्यायालय ने नजरबंदी का आदेश दिया है।

131. परिस्थितियाँ जो फिर से विद्रोह करती हैं

गृह आगमन का आदेश धारा 167 के तहत एक होना।

उच्च न्यायालय 28.08.2018 पर रिट याचिका पर विचार करता है।

1 .

इसका इरादा अगले ही दिन मामले को निपटाने का था।

ऐसी परिस्थितियों में नजरबंदी का आदेश पारित किया गया था। लेकिन हिरासत थी और इससे भी ज्यादा, यह 34 दिनों तक चली।

2 .

उच्च न्यायालय में प्रविष्टियों को देखने में असमर्थ था केस डायरी के रूप में प्रविष्टियाँ मराठी भाषा में थीं। वास्तव में, अदालत दस्तावेजों से यह पता लगाने में असमर्थता व्यक्त करती है कि अपीलार्थी के खिलाफ मामला वास्तव में क्या है

था। दस्तावेज़ों का अनुवाद अगले दिन उपलब्ध कराया जाना था। अनुवाद उपलब्ध नहीं कराए गए थे। फिर भी 28.08.2018 पर अगले आदेश तक नजरबंदी का आदेश दिया गया था। प्रासंगिक बात यह है कि धारा 167 के तहत कार्य करने वाले मजिस्ट्रेट पर लागू कानून के मानकों के अनुसार, उच्च न्यायालय धारा 167 के तहत कार्य करने का इरादा नहीं रखता है। यह कहने से अलग है कि इसने उल्लंघन में काम किया

कानून का आदेश।

यह सच है कि जांच पर कोई रोक नहीं थी।

3 .

हालांकि, जिसे चुनौती दी गई थी वह ट्रांजिट रिमांड थी। प्राथमिकी दूसरे राज्य में दर्ज की गई थी। अपीलार्थी से पूछताछ जाँच का अभिन्न अंग होगा। शर्तों पर

जेपीआरईएमई अदालत की रिपोर्ट

उच्च न्यायालय द्वारा नजरबंदी के संबंध में अधिरोपित इस तरह की पूछताछ करना संभव नहीं था। ऐसा प्रतीत होता है कि दलों ने इस पर विचार नहीं किया जैसा कि वर्तमान में है।

प्रक्षेपित। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रतिवादी उच्च न्यायालय का रुख कर सकता था।

अपीलार्थी के अनुसार नजरबंदी के माध्यम से है

उच्च न्यायालय का आदेश। गिरफ्तारी 28.08.2018 पर 2.15PM पर की गई थी। सीएमएम का आदेश अगले लगभग एक घंटे के भीतर पारित कर दिया गया। उच्च न्यायालय का आदेश लगभग 4.30PM पर पारित किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह मजिस्ट्रेट का आदेश है जिसने धारा 167 के तहत पुलिस को रिमांड की शुरुआत की। अभिरक्षा। दिल्ली उच्च न्यायालय ने यह पाया कि मजिस्ट्रेट द्वारा एक वैध रिमांड आदेश के समर्थन के बिना, हिरासत 24 घंटे से अधिक हो गई, जिससे यह ए. एम. नवलखा बनाम हो गया।

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

यू. ए. पी. ए. की धारा 43 (डी) (2) के तहत अनुमेय 30 दिनों की पुलिस हिरासत, रिमांड के पहले 30 दिनों के भीतर प्राप्त की जानी चाहिए। अपीलार्थी के मामले के आधार पर कार्यवाही करते हुए कि पहली रिमांड 28.08.2018 पर हुई थी, अपीलार्थी का 2020 में 11 दिनों की अवधि के लिए पुलिस हिरासत में होना अपीलार्थी के मामले और कानून के साथ असंगत है। हालाँकि यू. ए. पी. ए. के तहत धारा 43 (डी) (2) के दूसरे प्रावधान के तहत पहले 30 दिनों से आगे पुलिस हिरासत में रखा जा सकता है, लेकिन इसकी अनुमति केवल ऐसी स्थिति में दी जाती है, जहाँ आरोपी न्यायिक हिरासत में हो। मान लीजिए, अपीलार्थी न्यायिक हिरासत में नहीं था, जिसने एन. आई. ए. के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया था। 14.04.2020 , जो पुलिस अभिरक्षा का निर्देश देने वाले पहले आदेश की पूर्व संध्या पर है।

जेपीआरईएमई अदालत की रिपोर्ट

प्रत्यर्थी द्वारा उठाई गई दलीलों में से एक यह है कि यदि धारा 167 के तहत नजरबंदी का आदेश पारित किया गया था

Cr.PC तब दिल्ली उच्च न्यायालय ने पारगमन रिमांड को दरकिनार करने के बाद या तो अपीलार्थी को जमानत पर रिहा कर दिया होगा या उसे हिरासत में भेज दिया होगा। इसके बजाय, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को इस आधार पर रिहा कर दिया कि धारा 56 और धारा को देखते हुए रिमांड आदेश अवैध था और इसे दरकिनार कर दिया गया था

57 24 घंटे से अधिक समय तक हिरासत में नहीं रखा जा सकता है। अब धारा 167 के तहत एक कार्यवाही में जहां एक उच्च न्यायालय के समक्ष रिमांड आदेश जारी किया जाता है, यह गिरफ्तारी का अनुमान लगाता है।

संज्ञेय अपराध के संबंध में। अब यदि रिमांड को उच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया जाता है, तो हमारा विचार है कि एक कार्यवाही में जो धारा के तहत रिमांड से उत्पन्न हुई है

167 , फिर रिमांड को रद्द करने पर जो आदेश आएगा, वह उसे जमानत देना या रिमांड में संशोधन करना होगा। यही कारण है कि एक गिरफ्तारी होती है जो पहले गेंद को लुढ़कने के लिए सेट करती है। इसलिए, उसे या तो जमानत पर रिहा करना होगा, नहीं तो उसे रिमांड पर लेना होगा। यहीं पर हम (1969) 1 एस. सी. सी. 292 (ऊपर) में इस न्यायालय के निर्णय को याद कर सकते हैं। रिमांड था। अनुच्छेद 22 (1) का उल्लंघन अनुच्छेद के तहत एक रिट याचिका में पाया गया था।

32. वास्तव में, यह एक गैर-संज्ञेय अपराध था, जो इसमें शामिल था। अदालत ने याचिकाकर्ताओं को रिहा कर दिया। रिमांड आदेश स्पष्ट रूप से नियमित पाए गए थे और ऐसे नहीं थे जो संवैधानिक दुर्बलताओं को ठीक कर सकें। उक्त मामले में,

गिरफ्तारी को मुद्दा बनाया गया और कानून के अनुसार गलत पाया गया।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि अग्रिम जमानत के लिए आवेदन दायर किया गया है जिसमें अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से अवधि का अनुमान लगाया है।

सही है। डिफ़ॉल्ट जमानत का अधिकार मौलिक अधिकार है [देखें] बिक्रमजीत सिंह बनाम। पंजाब राज्य 2 ओ]। लेकिन यहाँ फिर से, यह धारा 167 की शर्तों के पूरा होने पर निर्भर करता है।

सी. सी. 616 गौतम नवलखा बनाम राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

द नॉट टाइटनेड

132. अब, तर्क, जो जीवित रहता है, इस प्रकार है:

महत्वपूर्ण बात यह थी कि अपीलार्थी ने वास्तव में

नजरबंदी के माध्यम से 34 दिनों की वास्तविक हिरासत। यह तथ्य कि मजिस्ट्रेट के आदेश में अवैधता हो सकती है, वास्तविक अभिरक्षा के तथ्य को दूर नहीं करेगा। यह तथ्य कि अपीलार्थी को पुलिस हिरासत में दिया गया था और उसने आपत्ति नहीं की थी, अपीलार्थी के अधिकार को पराजित नहीं कर सकता है। प्रासंगिक बात यह है कि 90 दिनों की अवधि समाप्त हो गई थी। हमारे समक्ष इस बात पर जोर दिया जाता है कि चाहे वह उच्च न्यायालय हो, वह कानून के अधिकार के बिना अपीलार्थी को हिरासत में लेने का आदेश नहीं दे सकता था। एकमात्र कानून, जो समर्थन करता है नजरबंदी, सी. आर. पी. सी. की धारा 167 है।

133. हम पहले ही उच्च न्यायालय द्वारा पारित आर के आसपास की परिस्थितियों पर ध्यान दे चुके हैं। हम भी, इस मोड़ पर, फिर से

इस न्यायालय द्वारा पारित 29.08.2018 दिनांकित आदेश:

" बोर्ड पर लिया गया। नोटिस जारी करें।

श्री तुषार मेहता और श्री मनिंदर सिंह, श्री आर. बालासुब्रमण्यम द्वारा सहायता प्राप्त अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, विद्वान वकील 5.9.2018 द्वारा जवाबी हलफनामा दायर करेंगे। अगर इसका कोई जवाब है, तो उसे तीन दिनों के भीतर दाखिल किया जाए। हमने अंतरिम राहत के लिए प्रार्थना पर विचार किया है। याचिकाकर्ताओं की ओर से पेश वरिष्ठ वकील डॉ. अभिषेक मनु सिंघवी ने कहा कि उच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार श्री गौतम नवलखा और सुश्री सुधा भारद्वाज ने

घर में नजरबंद रखा गया। उनके द्वारा यह सुझाव दिया गया है कि एक अंतरिम उपाय के रूप में, उन्हें कोई आपत्ति नहीं है यदि यह न्यायालय आदेश देता है कि श्री वरवर

राव, श्री अरुण फरेरा और श्री वर्नोन गोंजाल्विस, यदि गिरफ्तार किए जाते हैं, तो उन्हें अपने घरों में नजरबंद रखा जाता है। हम उसी के अनुसार आदेश देते हैं। श्री गौतम नवलखा और सुश्री.

सुधा भारद्वाज को हमारे आदेशों के संदर्भ में बढ़ाया जा सकता है।

कहने की जरूरत नहीं है, एक अंतरिम आदेश एक अंतरिम आदेश है और सभी

विवादों को खुला रखा जाता है।

मामला 6.9.2018 ". [2021] 5 एस. सी. आर. पर सूचीबद्ध किया जाए।

इस न्यायालय के समक्ष जनहित याचिका में याचिकाकर्ताओं के वकील के सुझाव पर उन्हें नजरबंद रखा गया था कि उन्हें तीन अन्य लोगों में कोई आपत्ति नहीं है, यदि उन्हें गिरफ्तार किया जाता है, तो उन्हें उनके अपने घरों में नजरबंद रखा जाए, ऐसा आदेश दिया गया था। यह ऐसा मामला नहीं है जहां इस न्यायालय के दिमाग में यह कर्तव्य भी था कि वह उनसे संबंधित मामले की डायरियों में प्रविष्टियों को देखे, वास्तव में उन्हें देखे जाने की तो बात ही छोड़िए। काफी स्पष्ट रूप से, उन व्यक्तियों के संबंध में, नजरबंदी भी इसका परिणाम था रिट याचिकाकर्ताओं के लिए वरिष्ठ वकील द्वारा प्रयोग किया गया विकल्प, जो नजरबंदी से गुजरने वाले व्यक्ति नहीं थे। इसमें कोई शक नहीं कि जनता

136. दूसरी ओर, भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा। कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार के अलावा। यह अनुच्छेद एक मौलिक अधिकार बनाता है, जिसे माफ नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, उन व्यक्तियों के विपरीत, जो स्पष्ट रूप से के आधार पर नजरबंदी से गुजरे

अपीलार्थी के मामले में उनकी ओर से किया गया प्रस्ताव, दिनांक 29.08.2018 के आदेश से पहले भी, उच्च न्यायालय ने नजरबंदी का आदेश दिया था, जिसे गौतम नवलखा बनाम.

राष्ट्रीय जांच एजेंसी [के. एम. जोसेफ, जे.]

घर में नजरबंदी का गठन किया। अपीलार्थी संज्ञेय अपराधों को लागू करने वाली एफ़. आई. आर. में अभियुक्त था। उसे एक पुलिस अधिकारी ने गिरफ्तार कर लिया। उसे मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। धारा 167 के तहत एक पारगमन रिमांड, जो एक रिमांड थी, पारित की गई थी। पुलिस हिरासत का पालन किया गया। उच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि अपीलार्थी को नजरबंद रखा जाए। ट्रांजिट रिमांड के आदेश को दरकिनार करने से पुलिस हिरासत या नजरबंदी समाप्त नहीं होगी। हम इस बात से सहमत हैं कि सी. एम. एम., साकेत के क्रम में अवैधता स्वतंत्रता के अभाव को मिटा नहीं पाएगी। लेकिन धारा 167 के तहत कथित रूप से पारित किए गए आदेश के खिलाफ अन्य पहलुओं पर पहले ही चर्चा की जा चुकी है। इस प्रस्ताव के साथ कोई झगड़ा नहीं हो सकता है कि अदालत किसी व्यक्ति को तब तक रिमांड पर नहीं ले सकती जब तक कि अदालत कानून द्वारा ऐसा करने के लिए अधिकृत न हो। हालाँकि, हम इस मामले में नजरबंदी की वैधता पर अपील में नहीं बैठे हैं। लेकिन हम यहां यह पता लगाने के लिए हैं कि क्या नजरबंदी धारा 167 के तहत आती है। हमारा विचार है कि इस मामले के तथ्यों में, धारा 167 के तहत नजरबंदी का आदेश नहीं दिया गया था। यह.

धारा 167 के तहत पारित होने के रूप में नहीं माना जा सकता है।

137. एकटा पहलू अछि जे विशिष्ट अछि। धारा के तहत अभिरक्षा

167 अब तक इसे पुलिस अभिरक्षा और न्यायिक अभिरक्षा के रूप में समझा जाता रहा है, जिसमें न्यायिक अभिरक्षा को आम तौर पर जेल अभिरक्षा के साथ जोड़ा जाता है।

138. धारा के तहत हिरासत के हिस्से के रूप में नजरबंदी की अवधारणा

167 इस न्यायालय सहित न्यायालयों को शामिल नहीं किया है। हालाँकि, जब यह मुद्दा ध्यान में आया है, और इसके घटकों को देखते हुए हमने यह विचार बनाया है कि इसमें हिरासत शामिल है जो धारा 167 के तहत आती है।

139. हम देखते हैं कि धारा 167 के तहत उपयुक्त मामलों में यह

नजरबंदी का आदेश देने के लिए अदालतें खुली होंगी। जहां तक इसके नियोजन का संबंध है, बिना विस्तृत किए, हम आयु, स्वास्थ्य स्थिति और अभियुक्त की पृष्ठभूमि, अपराध की प्रकृति, हिरासत के अन्य रूपों की आवश्यकता और नजरबंदी की शर्तों को लागू करने की क्षमता जैसे मानदंडों का संकेत दे सकते हैं। हम धारा 309 के तहत यह भी संकेत देंगे कि न्यायिक हिरासत का आदेश दिए जाने के कारण, मानदंडों का पालन करने के अधीन, अदालतें इसे योग्य और उपयुक्त मामलों में नियोजित करने के लिए स्वतंत्र होंगी।

140. जहां तक दोषसिद्धि के बाद के मामलों का संबंध है, हम इसे उनके लिए खुला छोड़ देंगे।

विधायिका अपने नियोजन पर विचार करे। हमने जेलों में भीड़भाड़ की समस्याओं और जेलों के रखरखाव में राज्य को होने वाली लागत का संकेत दिया है।

141. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी की नजरबंदी थी

हम अपील को खारिज करते हैं जो धारा 167 के तहत कथित नहीं है और इसे इसके तहत पारित नहीं माना जा सकता है। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा। देविका गुजराल

या

चिका खारिज कर दी गई।